शैक्षिक मंथन

(द्विभाषी मासिक)

शैक्षिक क्षेत्र की प्रतिनिधि पत्रिका

वर्ष : 15 अंक : 9 1 अप्रैल 2023

चैत्र-वैशाख मास, विक्रम संवत् 2080

परामर्श

के.नरहरि

डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल

जगदीश प्रसाद सिंघल

शिवानन्द सिन्दनकेरा

जी. लक्ष्मण

महेन्द्र कुमार

❖

सम्पादक

डॉ. शिवशरण कौशिक

❖

संपादक मंडल

प्रो. नन्द किशोर पाण्डेय

डॉ. ओमप्रकाश पारीक

डॉ. एस.पी. सिंह

डॉ. दीनदयाल गुप्ता

भरत शर्मा

❖

प्रबन्ध सम्पादक

महेन्द्र कपूर

❖

व्यवस्थापक

बसंत जिंदल

❖

प्रेषण प्रभारी : **नौरंग सहाय 'भारतीय'**

प्रकाशकीय कार्यालय
82, पटेल कॉलोनी, सरदार पटेल मार्ग,
जयपुर (राजस्थान) 302001
दूरभाष : 9414040403

दिल्ली ब्यूरो :
शैक्षिक महासंघ सदन, 606/13,
कृष्णा गली नं.9, मौजपुर, दिल्ली - 110053
दूरभाष : 9868711893

E-mail :
shaikshikmanthan@gmail.com
Visit us at :
www.shaikshikmanthan.com

वार्षिक शुल्क ₹ 250/-
दस वर्षीय शुल्क ₹ 2000/-

पृष्ठ संयोजन : सागर कम्प्यूटर, जयपुर

शैक्षिक मंथन मासिक में प्रकाशित सामग्री से संपादक मण्डल का सहमत होना आवश्यक नहीं है तथा चित्रों का प्रतीकात्मक प्रयोग किया गया है।

भारतीय शिक्षा पद्धति में मूल्यांकन सतत प्रक्रिया ❏ डॉ. राजकुमार चतुर्वेदी

श्रीराम का उदाहरण भी हमारे सम्मुख है। श्री राम-लक्ष्मण कई राक्षसों को मारने के लिए अपने गुरु के साथ जाते हैं और सहज रूप से उन सब का संहार करते हैं। उनकी आयु इतनी बड़ी नहीं थी परंतु गुरु को पूरा विश्वास था कि वो विजय प्राप्त कर सकते हैं। अपने गुरु को अपने शिष्यों पर मूल्यांकन का पूरा भरोसा होना चाहिए और वह शिक्षा पद्धति जिसमें गुरु और शिष्य एक दूसरे के पूरक होकर अध्ययन करते हैं तो निश्चित रूप से विद्यार्थी अपने मूल्यांकन में खरा उतरता है।

4

अनुक्रम

3.	सम्पादकीय	- डॉ. शिवशरण कौशिक
8.	मूल्यांकन प्रक्रिया और राष्ट्रीय शिक्षा नीति	- प्रियंका कुमारी गर्ग
10.	सतत एवं व्यापक मूल्यांकन की आवश्यकता	- प्रो. राजेश कुमार जांगिड
13.	राष्ट्रीय शिक्षा नीति एवं मूल्यांकन-पद्धति	- प्रो. आलोक कु. चक्रवाल
17.	शिक्षा व्यवस्था में परीक्षाओं का महत्त्व	- प्रो. प्रवीन कुमार मिश्र
19.	सर्वांगीण विकास में रचनात्मक मूल्यांकन...	- अमन आकाश
21.	Pattern of Evaluation in Our Education...	- Prof. Geeta Bhatt
24.	Education and Evaluation	- Dr. T.S. Girishkumar
30.	Assessment and Evaluation System in...	- Dr. Shamshir Singh
33.	Importance of Examination in the ...	- Prof. Suneel Kumar
36.	Assessment and Examination in India	- Darshan Kumar
39.	राष्ट्र का स्वरूप	- डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल
42.	एक महान क्रांतिकारी शिक्षक	- पं. माखन लाल चतुर्वेदी

Assessment in School Education as per NEP – 20

❏ **D. Ramakrishna Rao**

Teacher is the frontline warrior and fulcrum to bring theory, policies and expectations to practice level to the class room. Hence, he should be qualitatively trained with different strategies and practices of school based assessment. It should be in-depth, intense and exhaustive practical training to equip the educator with proper mindset and tools. Entry and exit assessment of training to assure required professional standards is also essential with periodical updation and upskilling under experienced mentors.

27

संपादकीय

डॉ. शिवशरण कौशिक
सम्पादक

मार्च-अप्रैल का समय देशभर के सभी प्रांतों के माध्यमिक शिक्षा बोर्ड और विश्वविद्यालयों की परीक्षाओं तथा विद्यार्थियों के मूल्यांकन का समय होता है। शिक्षा मूलतः विद्यार्थी के नैसर्गिक गुणों के विकास, स्वाभाविक जिज्ञासाओं के समाधान तथा ज्ञानान्वेषण की अपार संभावनाएँ खोलने वाला रचनात्मक उपक्रम है। इसीलिए किसी भी स्वस्थ शिक्षा-व्यवस्था में विद्यार्थी के प्राप्त ज्ञान का उसकी स्मृति तथा नवोन्मेषी दृष्टिकोण पर केंद्रित सैद्धांतिक या प्रायोगिक, लिखित या मौखिक या फिर किसी अन्य पद्धति से परीक्षा लेकर मूल्यांकन किया जाता है। मनोवैज्ञानिक रूप से प्रत्येक विद्यार्थी का अनुभव संसार तथा बौद्धिक चेतना भिन्न-भिन्न होती है जो उनके परीक्षा परिणाम के भिन्न स्तरों के माध्यम से परिलक्षित होती है। नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति में परीक्षा सुधार तथा विद्यार्थी मूल्यांकन के कुछ व्यावहारिक तथा रचनात्मक सुझाव दिए गए हैं।

नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) 2020 में समूचे देश की उच्च शिक्षा समृद्धि के लिए एक एकल नियामक संस्था 'भारतीय उच्च शिक्षा आयोग' (हायर एजुकेशन कमिशन ऑफ इंडिया) की परिकल्पना की गई थी। यह आयोग वर्तमान में उच्च शिक्षा क्षेत्र में कार्य कर रहे विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी), अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद (एआईसीटीई) तथा राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद (एनसीटीई) आदि तीनों नियामकों को समग्र रूप से समेकित करते हुए कार्य करेगा। सरकार द्वारा इसकी स्थापना शिक्षा की गुणवत्ता बढ़ाने तथा मनमानी करने वाले शिक्षण संस्थानों पर रोक लगाने के उद्देश्य से की गई है।

भारतीय उच्च शिक्षा आयोग चिकित्सा शिक्षा तथा विधि शिक्षा को छोड़कर अन्य सभी विषयों के अध्ययन-अध्यापन, पाठ्यक्रम निर्माण, शोध-अनुसंधान और मूल्यांकन आदि के क्षेत्र में कार्य करेगा। यह भी प्रस्तावित है कि उच्च शिक्षा आयोग के कार्य का विभाजन करते हुए शिक्षक-शिक्षा और उच्च-शिक्षा क्षेत्र में नियामकों के कार्य का निर्धारण करने हेतु राष्ट्रीय उच्चतर शिक्षा नियामक परिषद (एन एच ई आर सी), उच्च शिक्षा कार्यक्रमों के परिणामों के आकलन तथा मानक निर्धारण हेतु सामान्य शिक्षा परिषद (जीईसी), शिक्षा संस्थानों की ग्रेडिंग हेतु राष्ट्रीय प्रत्यायन परिषद तथा उच्च शिक्षा क्षेत्र में कार्यरत महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों के वित्तपोषण के कार्य के लिए उच्चतर शिक्षा अनुदान परिषद (एचईजीसी) जैसी संघटक संस्थाओं के गठन का प्रस्ताव है।

उल्लेखनीय है कि वर्तमान नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 29 जुलाई 2020 को भारत सरकार द्वारा घोषित की गई और केंद्र सरकार से राजनीतिक सहमति रखने वाली राज्य सरकारों ने इसको तुरंत लागू करने में काफी उत्साह प्रकट किया। हिमाचल प्रदेश, कर्नाटक, मध्यप्रदेश जैसे प्रांतों ने इसके बहुत से मूलभूत प्रस्तावों की क्रियान्विति आरंभ कर दी है। हम यह भी जानते हैं कि शिक्षा को भारतीय संविधान की समवर्ती सूची में सम्मिलित किया गया है। इसलिए इसकी आड़ में जो राज्य सरकारें केंद्र सरकार से राजनीतिक असहमति रखती हैं, वे इसे लागू करने की अपेक्षा इसमें कई कमियों की ओर संकेत करती हैं। लेकिन यह भी महत्त्वपूर्ण है कि इन प्रतिद्वंद्वी राज्य सरकारों ने अप्रत्यक्ष रूप से नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति के बहुत से सुझावों को धीरे-धीरे लागू करने की ओर कदम बढ़ाये हैं, उदाहरणस्वरूप राजस्थान सरकार ने हाल ही में एनसीईआरटी के समान पाठ्यक्रमों को अपने प्रदेश में लागू करने का निर्णय लिया है। यहाँ महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह उठता है कि केन्द्र सरकार द्वारा गठित नवीन 'भारतीय उच्च शिक्षा आयोग' का उक्त वर्णित स्वरूप वास्तविक धरातल पर कब तक कार्य करना आरंभ करेगा ? यह प्रश्न इसलिए भी आवश्यक है क्योंकि नई शिक्षा नीति में एक ओर विश्वविद्यालय अनुदान आयोग को बंद करने की बात कही गई है तो दूसरी ओर इसी वर्ष 2023 में यूजीसी को पुनः वित्तीय सहयोग जारी कर एक प्रकार से उसका विस्तार किया गया है।

इस शिक्षा नीति में देश की जीडीपी का 6 प्रतिशत शिक्षा पर व्यय करने का लक्ष्य रखा गया है। साथ ही मानव संसाधन विकास मंत्रालय का नाम बदलकर शिक्षा मंत्रालय किया गया है जो सरकार की वैचारिक गंभीरता को प्रकट करता है। कला, विज्ञान तथा व्यावसायिक पाठ्यक्रमों के मध्य समन्वय स्थापित करते हुए समेकित पाठ्यक्रमों का निर्माण भी आरंभ किया जा चुका है। निकट भविष्य में कक्षा 10 व 12 की परीक्षाओं में भी सेमेस्टर या बहुविकल्पी प्रश्नों को अधिक महत्त्व दिए जाने की योजना है। विद्यार्थियों के प्रगति मूल्यांकन के लिए मानक निर्धारण निकाय के रूप में परख (पी ए आर ए के एच) नामक एक नए राष्ट्रीय आकलन केंद्र (नेशनल एसेसमेंट सेंटर) की स्थापना भी की जा रही है।

कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति एक प्रकार से 'नव-स्वाधीन भारत' की कल्पना है जिसमें भारतीय ज्ञान परंपरा के साथ स्थानीय शोध और अनुसंधान की प्रवृत्ति को प्रश्रय मिलेगा। साथ ही भारत की औपनिवेशिक शिक्षा प्रणाली से मुक्ति पाने के साथ उस में स्थानीय भाषा माध्यम, अध्ययन के विभिन्न स्थानीय विषयों और परीक्षा-मूल्यांकन की भारतीय पद्धतियों का पुनर्विकास हो सकेगा। शिक्षा नीति में भी नियंताओं का मंतव्य स्पष्ट है कि हमारी पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम, शिक्षण-प्रशिक्षण और परीक्षा प्रणाली में आमूल-चूल परिवर्तन करने की आवश्यकता है, तभी हम विद्यार्थियों में विकसित होती रटने की प्रवृत्ति से मुक्ति पाकर उनके व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास और विचारों की मौलिकता की पृष्ठभूमि का निर्माण कर सकेंगे।

आशा है, 'परीक्षा-पद्धति और मूल्यांकन' विषयक यह अंक आपको रुचिकर हो सकेगा!

हार्दिक शुभकामनाओं के साथ सादर! ❑

भारतीय शिक्षा पद्धति में मूल्यांकन सतत प्रक्रिया

डॉ. राजकुमार चतुर्वेदी

प्राचार्य, श्री शिवचरण माथुर राजकीय महाविद्यालय, मांडलगढ़, भीलवाड़ा (राजस्थान)

मूल्यांकन एक सतत प्रक्रिया है। हम लोग इस विषय को बहुत अच्छी तरह से जानते हैं। मूल्यांकन का मतलब है ,व्यक्तित्व के गुणों में विकास करना, प्रतिभा को बढ़ाना, प्रतिभा को निरंतरता प्रदान करना, कार्य की अच्छी योजना कराना, सफलता को निरंतरता देना, उत्साह उमंग को सफलता की ओर बढ़ाना और कोटि-कोटि लोगों के व्यवहार में और मूल्यांकन की गुणवत्ता बढ़ाना। मूल्यांकन स्वर का भी होता है। व्यवहार का भी होता है। चिंतन का भी होता है। तुलनात्मक रूप से हर स्तर पर मूल्यांकन निरंतर चलता रहता है।

परिवार हमारे देश का गौरव है। समाज में परिवार में पल्लवित बच्चे धैर्य के साथ किसी भी प्रकार के कार्य को करने में सक्षम होते हैं। वह प्रतियोगिता में भी सक्षम होते हैं और सामान्य जीवन के हर कार्य में भी उनका मूल्यांकन किया जाए तो भी वह सक्षम होते हैं क्योंकि परिवार में कार्य और मूल्यांकन साथ साथ चलते हैं। यह एक दूसरे की पूरक कड़ी है। कार्य और मूल्यांकन निश्चित रूप से व्यक्ति के व्यवहार में जुड़ जाए तो हर व्यक्ति चुनौती लेता ही है और मानव मात्र के कल्याण की भी सोचता है। परंतु वह केवल मात्र मूल्यांकन के डर से और समस्या युक्त होता है तो वह धीरे-धीरे अवसाद का शिकार होता है। आज के इस युग में मूल्यांकन की कठिन परीक्षाओं के द्वारा विद्यार्थी को अनेक प्रकार की परीक्षाएँ देनी पड़ती है। परिणाम स्वरूप वह परीक्षा देते-देते और चिड़चिड़ा हो जाता है। अपने कार्य में सफल नहीं होता है तो वह कभी-कभी और बेकार होता है। हमारे यहाँ मूल्य के बारे में बहुत अच्छा एक उद्घोष महावीर स्वामी ने दिया है 'जियो और जीने दो' विश्व में सब जगह अपनाया जा रहा है। इसी के माध्यम से हम व्यवहार को और मूल्य को ठीक समझ सकते हैं। स्वामी विवेकानंद जी कहते थे ''शिक्षा समाज के लिए है, व्यक्ति समाज का अंग होने के नाते उसमें सांस्कृतिक चेतना है। जितना महत्त्व सांस्कृतिक चेतना का है। उतना ही मूल्य-समाज शिक्षा का है।'' इसलिए उसका मूल्यांकन समाज हित में होना चाहिए। भारतीय व्यक्ति के हर कार्य में नैतिक शिक्षा, मानव कल्याण की शिक्षा, संस्कृति की शिक्षा परिवार से प्रारंभ होती थी।

परिवार में बच्चे जन्म के साथ अपने आप ही कार्य करते हैं। माँ की गोद में पल्लवित होते वह अपने परिवार के सभी बड़ों व छोटों से और अपनी आयु के समान वाले व्यक्तियों से शब्द व्याख्या, व्यवस्था, परिवार के परिवेश में संस्कार

सीखता है। इस प्रकार से वह अपने परिवार में छोटे-छोटे कार्य को करते-करते कई बार परीक्षा देता है और परिवार में लोग उसका मूल्यांकन भी करते हैं परंतु कभी उसको चुनौती नहीं लगती और वह जीवन में और धीरे-धीरे आगे बढ़ जाता है।

यह आगे बढ़ने की प्रक्रिया उसको कभी भी तनाव युक्त नहीं होती इसलिए हमारे यहाँ कहा गया है - ''परिवार वह इकाई है, जहाँ से व्यक्तित्व निर्माण का कार्य, मूल्यांकन का कार्य, हँसते-हँसते हो जाता है।'' भीलवाड़ा का एक उदाहरण में आप लोगों को निवेदन करना चाहता हूँ, ''फरवरी 2007 में संघ के सरसंघचालक माननीय सुदर्शन जी भीलवाड़ा में आए थे, उसमें वहाँ पर स्थानीय एवं स्वदेशी के व्यक्तियों का महासम्मेलन था। इस सम्मेलन में उन्होंने परिवार को मूल्यों की व गुणों की पाठशाला बताया था। जहाँ बच्चे सदैव उन्नति करते हैं और सदैव अपने मूल्यों में विकास करते हैं। यहाँ बच्चों की बात नहीं है, वह बूढ़े से लगाकर युवा से लगाकर सभी लोगों के लिए अमृत केंद्र है। जिससे उसको संजीवनी मिलती है। आज हम शिक्षा को पारिवारिक भाव से बढ़ाने के लिए प्रयास करें तो तनाव से होने वाले अवसाद से मुक्ति प्राप्त कर सकते हैं।

हम स्कूल को कंपटीशन के सेंटर बना चुके हैं, बच्चे वहाँ पर रटते हैं। शिक्षक भी उसे इसी प्रकार की शिक्षा दे रहा है। 90 से 100 प्रतिशत अंक लाने की चुनौती उसको मिलती है। बच्चे 100 प्रतिशत अंक लाने की होड़ में अपना मानसिक संतुलन खो देते हैं, घरों में चिड़चिड़ापन बढ़ रहा है। एक सर्वे के अनुसार भारत के अंदर कक्षा एक से आठवीं तक लगभग 3 से 4 प्रतिशत बच्चे मानसिक अवसाद के शिकार हो रहे हैं क्योंकि वह अंग्रेजी नहीं पढ़ना चाहते है। परंतु परिवार के लोग उसे अंग्रेजी के माध्यम से ही शिक्षा देना चाहते हैं। सौ प्रतिशत अंक केवल और केवल कुछ बच्चों के आ सकते हैं। परंतु 90 प्रतिशत बच्चों के 100 प्रतिशत नहीं आ सकते इसलिए मूल्यांकन को हमें निश्चित रूप से सुधारना चाहिए और सुधारते हुए हम लोगों को इस कार्य को ठीक करना चाहिए।

मूल्यांकन की भारत की शिक्षा पद्धति के श्रेष्ठ उदाहरण

मैं यहाँ युगंधर उपन्यास का एक श्रेष्ठ उदाहरण आप सभी के सम्मुख रख रहा हूँ। घटना राजा नंद के समय की है, जब भगवान श्री कृष्ण उनके यहाँ पल्लवित हो रहे थे। नंदू उनको पुत्र रूप में स्नेह देते। यशोदा माँ की गोद में वह खेलते थे, बढ़ते थे। जब वह बड़े हो गए, उस समय गाँव के अंदर गौ संसाधन धन के रूप में पूजित था तो नंद ने कहा कि अब कृष्णा गोपाल बनेगा। पूरे गाँव में इसके लिए उत्सव हुआ और न केवल श्री कृष्णा गोपालक बने अपितु गाँव के अंदर उत्सव के साथ-साथ में हजारों युवक गोपालक बन गए। समाज के अंदर हजारों युवक गोपालक श्रीकृष्ण के साथ बने। यह एक सरल गोपालक बनने का मूल्यांकन था। समाज में गोपालन को स्थापित करना था और स्थापित करके समाज में वह पूजनीय बने इसलिए समाज के हर घर से गोपालक निकले। यह श्रेष्ठतम पद्धति मूल्यांकन की आज हम लोग हमारी प्राचीन गौरवमई मूल्यांकन की पद्धति को भूल चुके हैं। इसलिए आवश्यकता है कि घर में संस्कारवान जो कार्य पहले होते थे उनको पुन: और धीरे-धीरे समाज में स्थापित किया जाए।

श्रीराम का उदाहरण भी हमारे सम्मुख है। श्री राम-लक्ष्मण कई राक्षसों को मारने के लिए अपने गुरु के साथ जाते हैं और सहज रूप से उन सब का संहार करते हैं। उनकी आयु इतनी बड़ी नहीं थी परंतु गुरु को पूरा विश्वास था कि वो विजय प्राप्त कर सकते हैं। अपने गुरु को अपने शिष्यों पर मूल्यांकन का पूरा भरोसा होना चाहिए और वह शिक्षा पद्धति जिसमें गुरु और शिष्य एक दूसरे के पूरक होकर अध्ययन करते हैं तो निश्चित रूप से विद्यार्थी अपने मूल्यांकन में खरा उतरता है। परंतु आज बढ़ती हुई जनसंख्या और शिक्षक और विद्यार्थी के बीच में गड़बड़ाई अनुपात के कारण विद्यार्थियों एवं शिक्षकों के बीच में संबंध नहीं हो पा रहा है और परिणाम स्वरूप जो शिक्षा विद्यार्थियों को गुणवान या मूल्यवान बनाने के लिए दी जानी चाहिए वह शिक्षा अब धीरे-धीरे इस स्थिति में पहुँच गई है, जहाँ हमें सोचने के

लिए विवश होना पड़ रहा है। विषय निराशा का नहीं है। आज भी हमारे यहाँ श्रेष्ठ गुरु की कतार खड़ी है जो अपने कर्म से नए-नए युवाओं को देश के लिए तैयार कर रहे हैं। विश्व की आज बड़ी-बड़ी कंपनियों में भारत के युवा नेतृत्व कर रहे हैं। चाहे वह सुंदर पिचाई हो या अन्य, चाहे वह अब्दुल कलाम हो या सुपर कंप्यूटर बनाने वाले भारत के डॉ. विजय भटकर, इसी शिक्षा पद्धति से वह निकले हैं। इसलिए हमें नया क्या हो, कैसे विद्यार्थी तनाव मुक्त हो सहज रूप से वह नए-नए शोध करते हुए आगे बढ़े, इसके लिए आने वाले समय में जो नई शिक्षा पद्धति आई है, उसको लेकर हम लोग आगे आ सकते हैं और उदाहरण स्थापित कर सकते हैं जिससे मूल्यांकन पद्धति सरल हो।

विद्यालयों में शिक्षा एवं मूल्यांकन

भारत में विद्यार्थी केंद्र धीरे-धीरे प्रतियोगिता के केंद्र बनते जा रहे हैं देखने में आता है। उच्च फीस लेकर जहाँ विद्यार्थी जाता है, वहाँ उसको उच्च शिक्षा प्राप्त हो रही है। परंतु समाज में उच्च वर्ग और निम्न वर्ग इसके कारण बढ़ रहा है। अंग्रेजी और हिंदी माध्यम का भी फर्क स्पष्ट नजर आने लगा है। समाज में शिक्षा के भी 2 वर्ग बन रहे हैं। अत: हमें आज आवश्यकता है कि समाज के अंदर केवल मात्र विद्यालय प्रतियोगिता के केंद्र ना बने, वहाँ सहज शिक्षा मिले जिससे व्यक्तित्व बन सके और समाज में वह विद्यार्थी अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिए तैयार हो सके। मैं यहाँ एक बहुत महत्त्वपूर्ण उदाहरण देना चाहता हूँ। मैं राजस्थान का रहने वाला हूँ, राजस्थान के दक्षिण पूर्व में जिसे हाडोती क्षेत्र कहते हैं, वहाँ कोटा है। कोटा में प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी के लिए लाखों बच्चे आते हैं छात्रों को देख कर ऐसा लगता है कि, कोटा संपूर्ण भारत का एक छोटा केंद्र हो गया है। कोटा, जहाँ श्रेष्ठ इंजीनियर और डॉक्टर बनने के लिए छात्र आ रहे हैं वहाँ से कई विद्यार्थी पागल होकर लौट रहे हैं, कई छात्र नशे के शिकार हो गए हैं और कई छात्र वहाँ से मौत के भी शिकार हो गए हैं। यह मूल्यांकन का तरीका हमें किस ओर ले जा रहा है। बच्चों को केवल प्रतियोगिता के लिए तैयार करना यह हमारा मूल्य नहीं है। और यही हमारा मूल्यांकन का तरीका नहीं है। हम उनको प्रतियोगिता की भट्टी में नहीं फेंक सकते हैं। हमें एक रूप से उनका मूल्यांकन हो उसके लिए नए देखने से सोचना पड़ेगा। नए प्रकार के तरीकों को शिक्षा में सम्मिलित करते हुए उनको प्रोत्साहित करना पड़ेगा और केवल और केवल इसके लिए नहीं कि वह इंजीनियर बने। समाज के अंदर केवल दो या तीन प्रतिशत लोग डॉक्टर और इंजीनियर बन रहे हैं। 97 प्रतिशत के लिए भी हमें सोचना पड़ेगा, समाज में सहज मूल्यांकन कैसे हो।

श्रीराम का उदाहरण भी हमारे सम्मुख है। श्री राम-लक्ष्मण कई राक्षसों को मारने के लिए अपने गुरु के साथ जाते हैं और सहज रूप से उन सब का संहार करते हैं। उनकी आयु इतनी बड़ी नहीं थी परंतु गुरु को पूरा विश्वास था कि वो विजय प्राप्त कर सकते हैं। अपने गुरु को अपने शिष्यों पर मूल्यांकन का पूरा भरोसा होना चाहिए और वह शिक्षा पद्धति जिसमें गुरु और शिष्य एक दूसरे के पूरक होकर अध्ययन करते हैं तो निश्चित रूप से विद्यार्थी अपने मूल्यांकन में खरा उतरता है।

संदीपनी आश्रम में भगवान श्री कृष्ण शिक्षा प्राप्त करते हैं। बलराम भी उनके साथ होते हैं। आश्रम के सारे विद्यार्थी भी वैसे ही होते हैं। सभी विद्यार्थी फूल चुनते हैं, सभी विद्यार्थी लकड़ी काट कर लाते हैं, सभी विद्यार्थी गुरु भाई को सब चीजें लाकर देते हैं, समाज सेवा भी करके आते हैं परंतु किसी में भी लेश मात्र भी यह भाव नहीं आता है कि मैं अपने गुरु के लिए भिक्षा नहीं माँगूंगा। आज इस उदाहरण को हम समाज में अक्षरश: पालन नहीं करते परंतु मूल्यांकन के लिए क्या हम सहज पद्धति विकसित कर सकते हैं। बस एक बार समाज के लोग इस बारे में सोचें, शिक्षक के बारे में सोचें कि हम समाज के

अंदर मूल्यांकन की पद्धति किस प्रकार से नई विकसित कर सकते हैं और इसको हमें कैसे स्थापित करना है। विश्व के अनेक देशों में भारत के युवा मोटी फीस देकर अध्ययन करने के लिए जा रहे हैं, क्या भारत के अंदर हम लोग विश्वस्तरीय शिक्षा के केंद्र बनाने में सक्षम नहीं रहे? क्या हमारे आईआईटी विश्वविद्यालय निश्चित रूप से गुणात्मक विश्वविद्यालय हैं ? भारत में 3.5 करोड़ युवा उच्च शिक्षा ले रहे हैं। उनकी गुणवत्ता हमें बनानी चाहिए उसके लिए हमारे को मूल्यांकन कार्य निश्चित रूप से सरल करना पड़ेगा और शिक्षक और विद्यार्थी के अनुपात को भी समुचित सुधारना पड़ेगा। हमारे साथ में जो विद्वान प्रोफेसर हैं, विद्वान साथी हैं, इस पर विचार विमर्श करें कि वह कौन सा मॉडल है जिसमें प्रवेश के माध्यम से ही बच्चों का समुचित विकास हो जाए और वह समाज के लिए तैयार हो जाए। उस मूल्यांकन का सरल तरीका खोजना हम सभी का दायित्व है।

भारत और विश्व में मूल्यांकन की तुलना

अनेक देश विभिन्न मूल्यांकन की पद्धति अपना रहे हैं, अपने यहाँ शिक्षा में गुणवत्ता युक्त परिवर्तन कर रहे हैं। फिनलैंड में 10 वर्ष तक किसी भी प्रकार की मूल्यांकन पद्धति नहीं है। स्विजरलैंड, कोरिया, जापान, इंग्लैंड इन देशों में भी बच्चों को शिक्षा के साथ-साथ स्थानीयता के भाव अधिकतम सिखाए जाते हैं और इससे बच्चे चुनौती लेने के भाव में या प्रेरणा के भाव में विकसित होते हैं। अंकों के आधार पर फिनलैंड में 16 वर्ष के पश्चात मूल्यांकन होता है। इंग्लैंड में मात्र 70 प्रतिशत अंक वाले विद्यार्थी ही फर्स्ट क्लास विद्यार्थी माने जाते हैं। कोरिया विश्व में ऐसा देश है जहाँ पर विश्व के अनेक देशों की तुलना में बच्चों पर अत्यधिक भार है। जैसा भारत में भी हम लोग महसूस करते हैं वहाँ 95 प्रतिशत अंक लाने वाले विद्यार्थी A grade विद्यार्थी माने जाते हैं। स्पेन में 10 में से 10 अंक लाने वाले विद्यार्थियों को श्रेष्ठ विद्यार्थी माना जाता है। स्विट्जरलैंड में 10 में से 6 अंक लाने वाला विद्यार्थी एक्सीलेंट होता है। चीन में 89 परसेंट वाला विद्यार्थी A ग्रेड का विद्यार्थी माना जाता है। विश्व में जापान में हर युवक तकनीशियन कहा जा सकता है। 16 वर्ष के बाद में ही वहाँ मानव कृत परीक्षा देनी पड़ती है। मैं आपको यहाँ इस बात को कहना चाह रहा हूँ कि मूल्यांकन को जितना समाज उपयोगी बनाया जाएगा वह उतना ही श्रेष्ठ होगा और उसको जितना परिवार केंद्रित बनाया जाएगा, विद्यार्थियों में संस्कार युक्त मूल्यांकन की पद्धति विकसित होगी। हम लोग अपने गौरवशाली मूल्यांकन पद्धति में से आगे

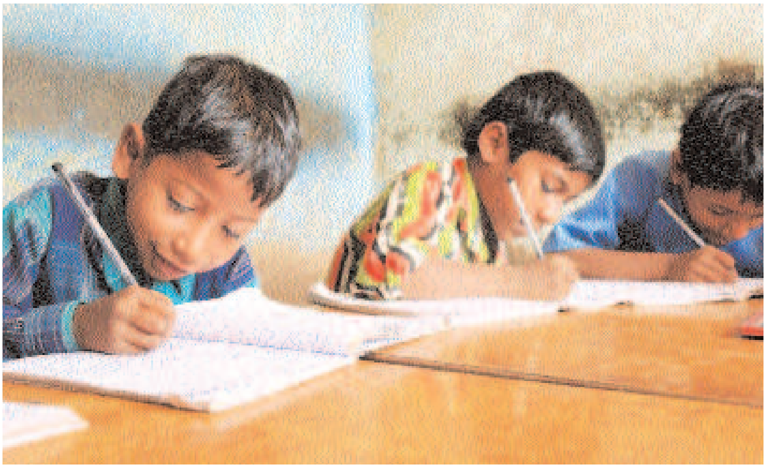

का रास्ता निकाल सकते हैं। यह हमें सोच समझकर करना चाहिए। विश्व के पश्चात देशों से हमें मूल्यांकन को कॉपी नहीं करना चाहिए।

मूल्यांकन की सरलता बच्चों का श्रेष्ठ भविष्य बना सकती है

भारतवर्ष विश्व का सबसे अधिक जनसंख्या वाला देश है। यहाँ प्राथमिक शिक्षा से लगाकर उच्च शिक्षा में पढ़ने वाले विद्यार्थियों की संख्या विश्व के किसी भी देश से अधिक है। आज भारत में वह ताकत है जो विश्व में नया परिवर्तन कर सकती है। आज का युग आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, नई तकनीक-आईपीआर, इंजीनियर, डॉक्टर, सीए, सीएस, प्रोफेसर अध्यापक तथा कई तकनीक में शिक्षित लोगों का है। हमें ऐसे समूह विकसित करने पड़ेंगे जहाँ विद्यार्थी सहज रूप से शिक्षा प्राप्त कर बेरोजगारी से मुक्त हो सके। विद्यार्थियों के विचारों में तकनीक का समावेश करना पड़ेगा। हर घर में तकनीक विकसित हो ऐसा विचार हमें विकसित करना पड़ेगा। कौशल युक्त विद्यार्थी निर्माण की ओर बढ़ेगा। भारत में उद्यमिता बढ़ेगी। हम यहाँ जापान के मॉडल को प्रेरणा के लिए ले सकते हैं। जापान में हर युवक तकनीशियन है। वहाँ इसीलिए प्राकृतिक संसाधनों के अभाव में भी जापान आज विश्व की तृतीय आर्थिक ताकत है। हम आर्थिक ताकत भी बनेंगे और भारत को बेरोजगारी से मुक्त भी बनाएँगे और भारत को गरीबी मुक्त भी बनाएँगे। तो हमें मूल्यांकन के इस चुनौतीपूर्ण प्रतियोगिता वाले वातावरण को सहज रूप से परिवर्तित करना पड़ेगा। चुनौती जरूरी है। परंतु मूल्यांकन सहज हो। हम समझते हैं शिक्षा पद्धति में परिवर्तन किया गया है। परिणाम सुखद आएँगे। मातृभाषा में प्राथमिक शिक्षा आगे चलकर मूल्यांकन को सरल करेगी। अंग्रेजी स्कूलों में भी मातृभाषा में शिक्षा संस्कार पर होगी और हमारा देश विश्व में अग्रणी बनेगा। ❑

मूल्यांकन प्रक्रिया और राष्ट्रीय शिक्षा नीति

प्रियंका कुमारी गर्ग
सहायक आचार्य, हिंदी,
राजस्थान विश्वविद्यालय,
जयपुर (राज.)

मूल्यांकन प्रत्येक व्यक्ति एवं कार्य की वस्तुस्थिति को ज्ञात करने का सर्वश्रेष्ठ माध्यम है। शिक्षण एक महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया है। शिक्षा के क्षेत्र में मूल्यांकन से अभिप्राय छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि से है। मूल्यांकन प्रक्रिया के द्वारा प्राप्त उद्देश्यों और उपलब्धियों की वांछनीयता का ज्ञान संभव हो पाता है। इसके द्वारा वांछित उद्देश्यों को किस सीमा तक प्राप्त किया गया है, इसका व्यावहारिक ज्ञान होता है। मूल्यांकन के अंतर्गत छात्रों के व्यवहार के गुणात्मक और मात्रात्मक वर्णन के साथ व्यवहार की वांछनीयता से संबंधित मूल्य निर्धारण भी निहित होता है। यह प्रक्रिया द्विआयामी होती है। अध्यापक यह जानना चाहता है कि वह अपने अध्यापन कार्य में कितना सफल हुआ। इसी तरह छात्र भी यह जानना चाहते हैं कि उन्होंने जो अध्ययन किया, उसे वे कितना आत्मसात कर पाए।

शिक्षा का प्रथम उद्देश्य बालक के व्यक्तित्व में अपेक्षित परिवर्तन लाना होता है। बालक के व्यवहार के मुख्यत: तीन पक्ष होते हैं– ज्ञानात्मक, भावात्मक एवं कौशलात्मक। छात्रों की शैक्षिक विकास में सरल से लेकर कठिन की ओर प्रक्रिया का प्रयोग किया जाता है। विद्यार्थी के ज्ञानात्मक पक्ष का विकास करते हुए क्रमश: ज्ञान, बोध, अनुप्रयोग, विश्लेषण, संश्लेषण से लेकर मूल्यांकन तक की प्रक्रिया तक पहुँचा जाता है। विद्यार्थी के भावात्मक पक्ष का विकास करते हुए क्रमश: उसकी ग्रहण शक्ति, अनुक्रिया, मूल्यांकन क्षमता, संगठन क्षमता एवं मूल्य विशिष्टीकरण क्षमता का विकास किया जाता है। छात्र के कौशलात्मक पक्ष का विकास करते हुए उसमें उत्तेजना, क्रियान्वयन, नियंत्रण, समायोजन एवं स्वभावीकरण के कौशल का निरूपण किया जाता है। विद्यार्थी के सभी पक्षों पर काम करते हुए शिक्षक अधिगम प्रक्रिया में विभिन्न प्रकार के मूल्यांकनों को स्थान देता है।

मूल्यांकन को तीन भागों में वर्गीकृत किया जा सकता है –1. दक्षता आधारित मूल्यांकन, 2. व्यापक मूल्यांकन एवं 3. सतत मूल्यांकन। विद्यार्थियों में अधिगम दक्षता के विकास का रचनात्मक एवं विकासात्मक दृष्टिकोण से किया गया मूल्यांकन दक्षता आधारित मूल्यांकन कहलाता है। इसके द्वारा छात्रों के रचनात्मक कौशलों का आकलन किया जाता है। छात्रों के संज्ञानात्मक पक्ष, भाव पक्ष और क्रियात्मक पक्ष का आकलन केवल दक्षता आधारित विधि से संभव नहीं होता। इसलिए छात्रों के चहुँमुखी विकास हेतु व्यापक मूल्यांकन की आवश्यकता होती है। व्यापक मूल्यांकन द्वारा छात्रों के वैयक्तिक एवं सामाजिक सद्‌गुण, पाठ्यक्रम संबंधी क्रियाएँ,

स्वास्थ्य विवरण, छात्र की अभिरुचियों एवं अभिवृत्तियों पर ध्यान दिया जाता है। सतत मूल्यांकन योजना एक निरंतर मूल्यांकन योजना है। सतत मूल्यांकन सार्थक ज्ञान के लिए निदान एवं उपचार का पथ प्रशस्त करता है। सतत मूल्यांकन द्वारा शिक्षक विद्यार्थी के ज्ञानार्जन की कठिनाइयों और उनके कारणों का निदान करके उचित उपचारात्मक साधन अपना कर उनके प्रगति-रोध एवं क्षति को कम कर सकता है तथा उन्हें अधिकतम ज्ञान प्राप्त करने में सहायता प्रदान करता है।

अधिगम प्रक्रिया में शिक्षण के पश्चात मूल्यांकन का विशेष महत्त्व है। मूल्यांकन प्रक्रिया शिक्षण उद्देश्यों की प्राप्ति की सूचक होती है। कक्षा में छात्रों का स्तरीकरण एवं वर्गीकरण करने में मूल्यांकन प्रक्रिया महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। मूल्यांकन प्रक्रिया द्वारा विद्यार्थियों की वैयक्तिक क्षमताओं को उभारने में मदद मिलती है। मूल्यांकन पाठ्यक्रम के परिवर्तन एवं परिमार्जन में सहायक होता है। मूल्यांकन प्रक्रिया छात्रों की कमजोरियों का निदान करने एवं उपचारात्मक अनुदेशन में सहायक होती है। मूल्यांकन प्रक्रिया द्वारा शिक्षक अपनी शिक्षण क्षमताओं एवं विधियों की उपयोगिता एवं कमजोरियों का पता लगा सकता है। मूल्यांकन द्वारा छात्र एवं शिक्षक दोनों पुनर्बलन एवं पृष्ठ-पोषण प्राप्त करते हैं। छात्रों के चहुँमुखी विकास को गति प्रदान करने के लिए एवं उनकी रुचियों, अभिवृत्तियों, कुशलताओं, क्षमताओं एवं कमजोरियों का पता लगाने में भी मूल्यांकन प्रक्रिया मददगार साबित होती है। शैक्षिक कार्यक्रमों की जाँच एवं पाठ्यक्रम निर्माण में भी मूल्यांकन प्रक्रिया की अहम भूमिका होती है। विद्यार्थियों की अधिगम कठिनाइयों को समझ कर पाठ्यक्रम में उनकी आवश्यकता के अनुसार उचित संशोधन एवं नवीन अध्याय को जोड़ने के लिए मूल्यांकन प्रक्रिया प्रथम पायदान साबित होती है।

> **राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 अधिगम एवं विकास को बढ़ावा देने के लिए सतत, रचनात्मक एवं दक्षता आधारित मूल्यांकन पर ही जोर देती है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति समग्र, 3600, बहुआयामी रिपोर्ट कार्ड का सुझाव देती है जो प्रत्येक विद्यार्थी के सर्वांगीण विकास के साथ विशिष्टता और प्रगति का विवरण प्रस्तुत करता है। इस नीति में शिक्षक द्वारा परीक्षण के अतिरिक्त स्व आंकलन एवं पियर ग्रुप परीक्षण भी सम्मिलित है। इसमें परीक्षा के दबाव और कोचिंग संस्कृति को कम करने के लिए बोर्ड को व्यवहारिक मॉडल लाने की छूट दी गई है।**

राधाकृष्णन आयोग, 1948 से लेकर मुदालियर आयोग 1952, शिक्षा आयोग 1964, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1968, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986, कार्य योजना 1992 एवं राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 तक शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में सुधार, प्रमाणन एवं गुणवत्ता अभिवर्धन के लिए मूल्यांकन को महत्त्वपूर्ण स्थान प्रदान किया गया है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 अधिगम एवं विकास को बढ़ावा देने के लिए सतत, रचनात्मक एवं दक्षता आधारित मूल्यांकन पर ही जोर देती है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति समग्र, 3600, बहुआयामी रिपोर्ट कार्ड का सुझाव देती है जो प्रत्येक विद्यार्थी के सर्वांगीण विकास के साथ विशिष्टता और प्रगति का विवरण प्रस्तुत करता है। इस नीति में शिक्षक द्वारा परीक्षण के अतिरिक्त स्व आकलन एवं पियर ग्रुप परीक्षण भी सम्मिलित है। इसमें परीक्षा के दबाव और कोचिंग संस्कृति को कम करने के लिए बोर्ड को व्यावहारिक मॉडल लाने की छूट दी गई है। जिसमें वार्षिक, सेमेस्टर या मॉड्यूलर परीक्षा को वस्तुनिष्ठ एवं विषयनिष्ठ दो भागों में उन्हें डिजाइन किया जा सकता है।

भारत में विद्यालयी शिक्षा के बोर्डों के मूल्यांकन एवं विद्यार्थियों के आकलन के लिए मानक एवं दिशा-निर्देश निर्धारित करने के लिए राष्ट्रीय आकलन केंद्र/परख पीएआरएकेएच (परफारमेंस एसेसमेंट रिव्यू एंड एनालिसिस ऑफ नॉलेज फॉर हॉलिस्टिक डेवलपमेंट) स्थापित करने का प्रस्ताव रखा गया है। यह नीति वर्ष में कम से कम दो बार उच्च गुणवत्ता वाली सामान्य योग्यता एवं अभिवृत्ति परीक्षा के साथ-साथ विज्ञान, मानविकी, भाषा एवं कला तथा व्यावसायिक एवं पेशेवर विषयों में उच्च गुणवत्ता वाले विषयों की परीक्षा हेतु राष्ट्रीय परीक्षण एजेंसी (नेशनल टेस्टिंग एजेंसी) के गठन की भी अनुशंसा करती है। राष्ट्रीय परीक्षण एजेंसी उच्च शिक्षा में स्नातक एवं परास्नातक परीक्षा प्रवेश एवं फैलोशिप के लिए परीक्षा आयोजित करने के साथ एक प्रमुख विशेषज्ञ स्वास्थ्य परीक्षण संगठन के रूप में कार्य करेगी। विश्वविद्यालयों को सुझाव दिया गया है कि वे अपनी प्रवेश परीक्षाओं के बजाय इन सामान्य प्रवेश परीक्षाओं का उपयोग करें। उच्च शिक्षा में आकलन के क्षेत्र में उच्च शिक्षा कार्यक्रमों के लिए अपेक्षित अधिगम के प्रतिफलों को विकसित करने के लिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति, राष्ट्रीय उच्च शिक्षा नियामक परिषद (एनएचईआरसी) के अंतर्गत सामान्य शिक्षा परिषद की स्थापना का भी प्रस्ताव करती है। इन सभी बिंदुओं के आधार पर आशा की जाती है कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 छात्रों के सर्वांगीण विकास के लिए नियम निर्धारण एवं मूल्यांकन में प्रभावी भूमिका निभाएगी।❑

सतत एवं व्यापक मूल्यांकन की आवश्यकता

प्रो. राजेश कुमार जांगिड

आचार्य,
आर्थिक अध्ययन विभाग,
पंजाब केन्द्रीय विश्वविद्यालय,
बठिंडा (पंजाब)

मूल्यांकन शिक्षण व अधिगम प्रक्रिया का महत्त्वपूर्ण घटक होता है। एक ओर यह शिक्षक व शिक्षार्थी के शिक्षण व अधिगम में सुधार करता है साथ ही इसकी सतत प्रक्रिया का स्वभाव निर्णय मूल्यों के निर्माण व विद्यार्थियों की उपलब्धियों के स्तर के निर्धारण में मदद करती है। कक्षा शिक्षण का मुख्य उद्देश्य विद्यार्थी के व्यवहार में अपेक्षित प्रभाव लाना होता है। यह अपेक्षित प्रभाव शिक्षा के उद्देश्यों पर निर्भर करता है जो विद्यालयों में शिक्षक द्वारा निर्माण किए जाते हैं। इस प्रकार शिक्षण प्रक्रिया के तीन मुख्य घटक, यथा-शिक्षा का उद्देश्य, अधिगम अनुभव तथा विद्यार्थी का मूल्यांकन होते हैं। इन तीनों के मध्य अंत:क्रिया दो तरफा होती है। अर्थात् एक दूसरे से प्रभावित होने के साथ-साथ एक दूसरे को प्रभावित भी करते हैं। शिक्षक द्वारा शिक्षण व विद्यार्थियों के मध्य अंत:क्रिया की अधिगम अनुभव निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है जो विद्यार्थी के व्यवहार में परिवर्तन का आधार बनती है। अधिगम स्तर के निर्धारण में कक्षा कक्ष के अधिगम वातावरण के अतिरिक्त शिक्षणेतर गतिविधियाँ, पुस्तकालय, प्रयोगशाला व क्षेत्र अध्ययन की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। मूल्यांकन का संबंध इस बात से होता है कि किस सीमा तक अध्ययन के उद्देश्य प्राप्त हो रहे हैं, साथ ही यह भी बताता है कि शिक्षण व पाठ्यक्रम में सुधार की कितनी आवश्यकता है, श्रम बाजार की मांग व आवश्यकता के अनुरूप शिक्षा का स्तर बने रहने व अभिभावकों से सतत संपर्क की आवश्यकता कितनी है। मूल्यांकन की प्रक्रिया के चार मुख्य घटक बताए जाते हैं। प्रथम, प्रमाण का व्यवस्थित संग्रह, इसका तात्पर्य है कि जो मूल्यांकन से सम्बन्धित सूचना संग्रहीत की जाती है वह व्यवस्थित और नियोजित तरीके से शुद्धता के साथ संग्रह की जावे। दूसरा, जिस सूचना का मूल्यांकन प्रक्रिया में संग्रह किया गया है उसकी उचित व्याख्या महत्त्वपूर्ण है। तीसरा, किस सीमा तक पाठ्यक्रम शिक्षा के व्यापक उद्देश्यों को पूरा करने में सफल है व चौथा, स्पष्ट रूप से निर्णय उन्मुख है तथा भावी कार्रवाई को इंगित करने में सक्षम है ताकि शिक्षा में बेहतर नीति और प्रयास समाहित किए जा सकें।

एक अच्छी मूल्यांकन पद्धति होने के लिए मूल्यांकन व्यवस्था को वैध, विश्वसनीय, व्यावहारिक, उचित और उपयोगी होना चाहिए। विद्यार्थी की शैक्षिक उपलब्धियों के मूल्यांकन के लिए एक वर्ष के दौरान सेमेस्टर, आवधिक परीक्षण, अर्द्ध वार्षिक व वार्षिक परीक्षा की विभिन्न अवस्थाएँ हो सकती हैं। आवधिक परीक्षणों का उद्देश्य विद्यार्थियों व शिक्षकों को विद्यार्थियों की उपलब्धियों

की प्रतिक्रिया (फीड बैक) प्रदान करना तथा विद्यार्थियों की कमजोरियों को सुधार करना होता है तथा यह रचनात्मक स्वरूप में होता है और अवधियों के अनुसार बँटा हुआ होता है। विद्यार्थियों के गैर शैक्षणिक गतिविधियों के मूल्यांकन के लिए रेटिंग स्केल की पद्धति काम में ली जाती है जो विद्यार्थी के सामाजिक और व्यक्तिगत गुणों जैसे नियमितता, समय पालना, अनुशासन, सफाई का स्वभाव, रूचि व उसके नजरिए को मापने के लिए होती है।

व्यापक मूल्यांकन

विद्यालयों में विद्यार्थियों के मूल्यांकन का क्षेत्र विद्यार्थी के व्यक्तित्व विकास के सभी पहलुओं को मापने के लिए होता है इसमें शैक्षिक व गैर शैक्षिक दोनों क्षेत्र समाहित होते हैं।

व्यापक मूल्यांकन प्रणाली में विद्यार्थी के शैक्षिक व गैर शैक्षिक दोनों तरह की उपलब्धियों का मूल्यांकन किया जाता है। शिक्षा लक्ष्य उन्मुख होती है तथा शिक्षा के परिणाम लक्ष्य की उपलब्धियों के आधार पर परखे जाते हैं। प्रत्येक शैक्षिक कार्यक्रम का उद्देश्य बच्चों के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास होता है। इसलिए विद्यालय में प्रदान किए जाने वाले अधिगम अनुभव इच्छित लक्ष्य की ओर गमन में योगदान देते हैं। इसलिए शिक्षक शिक्षा कार्यक्रम या पाठ्यक्रम को निर्धारित करते समय उसके अधिगम अनुभव के अनुसार सामग्री का जो शैक्षिक और गैर शैक्षिक परिणामों से लक्षित होती है का निर्धारण करता है। शैक्षिक क्षेत्र में विद्यार्थियों के ज्ञान और उसकी समझ तथा अपरिचित स्थितियों में उस ज्ञान के उपयोग की क्षमता का मूल्यांकन किया जाता है। गैर शैक्षिक मूल्यांकन क्षेत्र में विद्यार्थियों के नजरिए, रुचि, व्यक्तिगत व सामाजिक गुणों, शारीरिक स्वास्थ्य आदि को उद्देश्यों के रूप में रखा जाता है। विद्यार्थियों के इस शैक्षिक व गैर शैक्षिक क्षेत्र के मूल्यांकन के कारण ही इसे व्यापक मूल्यांकन कहा जाता है। व्यापक मूल्यांकन में शैक्षिक व गैर शैक्षिक दोनों तरह के क्षेत्रों पर समान रूप से बल दिया जाता है। दोनों तरह के क्षेत्रों को समाहित होने के कारण इस तरह की व्यापक मूल्यांकन प्रणाली में विविध प्रकार के तकनीक और उपकरणों का उपयोग किया जाता है। एनसीईआरटी, राज्य शैक्षिक अनुसंधान संगठनों ने इस तरीके के मूल्यांकन के लिए व्यापक रूप में उपकरणों को विकसित किया हुआ है।

राष्ट्रीय उपलब्धि सर्वेक्षण (2017), भारत में प्रारंभिक शिक्षा के स्तर पर गिरते अधिगम परिणामों को व्यक्त करता है। वैश्विक शिक्षा मॉनिटरिंग रिपोर्ट (2015) में भी यही चिंता व्यक्त की गई है। इसके निहितार्थ यह हैं कि पाठ्यक्रम एवं अधिगम स्तर के मध्य बढ़ते अंतराल की समय पर पहचान व उपचारात्मक उपाय उठाने की आवश्यकता है, ताकि समय रहते अधिगम स्तर व अधिगम प्रगति को सुधारा जा सके। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में सतत व व्यापक मूल्यांकन को न केवल विद्यालय स्तर ,अपितु उच्च शिक्षा स्तर अपनाने पर बल दिया गया है ताकि शिक्षा को समावेशी, गुणवत्तापूर्ण व समान पहुँच के लक्ष्यों के साथ आगे बढ़ाया जा सके।

सतत मूल्यांकन

शिक्षक की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि उसके किस सीमा तक अनुदेशात्मक उद्देश्य पूरे हुए। इन उद्देश्यों की प्राप्ति की प्रगति का मूल्यांकन किया जाता है। मूल्यांकन का एक मुख्य उद्देश्य विद्यार्थी को इस बात में समर्थ बनाना है कि वह अपने शैक्षिक विषयों की उपलब्धियों में सुधार करे, अच्छी आदतों का विकास करे, जो शिक्षा का उद्देश्य है। शिक्षा नीति (1986) में इस बात पर बल दिया गया है कि विद्यालय स्तर पर मूल्यांकन रचनात्मक व विकासात्मक प्रकृति का होना चाहिए क्योंकि विद्यार्थी की यह रचनात्मक अधिगम अवस्था होती है। इसलिए अधिगम में सुधार पर बल देना चाहिए। सतत मूल्यांकन में समय-समय पर इस बात की जानकारी होती है कि अनुदेशात्मक उपलब्धियों की प्राप्ति किस स्तर तक हो गई है तथा आगे की प्रक्रिया की दिशा क्या होगी? शिक्षा उद्देश्यों की दिशा में वांछित परिवर्तन लाने के लिए सतत मूल्यांकन की प्रक्रिया एक सतत प्रयास से जुड़ी हुई होती है।

सतत व व्यापक मूल्यांकन का महत्त्व व सीमाएँ

शिक्षण अधिगम की प्रक्रिया में विद्यार्थी के शैक्षिक व गैर शैक्षिक क्षेत्रों का मूल्यांकन करने के पश्चात शिक्षक को यह ज्ञात हो सकता है कि विद्यार्थी किन क्षेत्रों में कमजोर है व वह उसके लिए परीक्षण आधारित मूल्यांकन व उपचारात्मक उपाय प्रयोग किए जा सकते हैं। सतत मूल्यांकन में नियमित मूल्यांकन के द्वारा विद्यार्थी की क्षमताओं की प्रगति के मूल्यांकन को जाना जा सकता है। इससे शिक्षक परीक्षणात्मक कमजोरियों को जान सकते हैं और विद्यार्थी की व्यक्तिगत क्षमताओं व कमजोरियों के अनुसार शिक्षा रणनीति में परिवर्तन कर प्रयोग में ला सकते हैं। शिक्षक तत्काल यह जान सकते हैं कि विद्यार्थी किस विषय व किस उप विषय की पढ़ाई में कमजोर है व उसके अनुसार उपचारात्मक उपाय निर्धारित कर सकते हैं। यह शिक्षक की प्रभावी शिक्षण रणनीति में मदद करता है। शिक्षक यह भी जान सकते हैं कि यदि विद्यार्थी विद्यालय से बाहर के किसी कारण से प्रभावित होकर अध्ययन में कमजोर है तो उसका मूल्यांकन इसी आधार पर कर समाधान खोजा जा सकता है। विद्यार्थी भी अपनी क्षमताओं व कमजोरियों को जान सकते हैं। वह उसके अनुसार उसमें सुधार अपना सकते हैं। विद्यार्थियों के सतत मूल्यांकन उनके भावी अध्ययन क्षेत्र के निर्धारण में भी मदद करता है। सतत व्यापक मूल्यांकन में विद्यार्थी को कार्य देने से उसका अधिगम भी होता है और मूल्यांकन भी होता है अर्थात इसमें दोनों उद्देश्यों की इससे पूर्ति होती है। इन असाइनमेंट का उपयोग विद्यार्थियों के स्वयं मूल्यांकन, किसी एक विषय के विशिष्ट अध्ययन तथा कक्षा अध्ययन को विस्तारित करने के लिए किया जा सकता है। सतत और व्यापक मूल्यांकन व्यवस्था की श्रेष्ठता इस बात में भी निहित है कि ना केवल विद्यार्थी अपितु अभिभावक, शिक्षक, शिक्षा नियोजकों व प्रशासकों को भी मानव संसाधन प्रबंधन में मार्गदर्शन में सहयोग कर सकता है।

एक सामान्य सिद्धांत है कि कोई भी सूचना जो विद्यार्थियों का सही चित्र प्रस्तुत करने में तथा शैक्षिक उद्देश्यों के कारण प्रभावी कार्यक्रम में मदद करती है वह उल्लेख में समाहित किया जाना चाहिए। लेकिन इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि यह शिक्षकों के लिए बहुत अधिक भारी नहीं हो जाए, क्योंकि प्रगति रिपोर्ट लेखन की कोई सीमा नहीं है। यदि इस सूचना का उपयोग विद्यार्थी को मार्गदर्शन देने में, उसके लिए शिक्षण रणनीति में सुधार करने में, शिक्षण संस्था में उपलब्ध संसाधनों के मित्तव्ययता पूर्ण उपयोग में तथा विद्यार्थी के सही मूल्यांकन में मदद करता है, तो इसको छात्र प्रगति सूचना पत्र में उल्लेख करना बेहतर होगा।

निष्कर्ष

यूनेस्को (2017) द्वारा प्रतिपादित सतत विकास लक्ष्य क्रमांक चार समावेशी, समान तथा जीवन पर्यंत अधिगम पर बल देता है। शिक्षा में समानता, समावेशी व गुणवत्ता को प्राप्त करने में मूल्यांकन एक महत्त्वपूर्ण उपकरण है। संपूर्ण दुनिया में नीति निर्माता, शिक्षक, अभिभावक, विद्यार्थी व अन्य प्रभावी वर्ग उत्तरोत्तर शिक्षा में मूल्यांकन की व्यवस्था के बारे में चिंतित है। राष्ट्रीय उपलब्धि सर्वेक्षण तथा शिक्षा स्थति पर वार्षिक रिपोर्ट (2018) में भारत की शिक्षा में अधिगम उपलब्धता की विकट स्थिति को व्यक्त किया गया है। राष्ट्रीय उपलब्धि सर्वेक्षण (2017), भारत में प्रारंभिक शिक्षा के स्तर पर गिरते अधिगम परिणामों को व्यक्त करता है। वैश्विक शिक्षा मॉनिटरिंग रिपोर्ट (2015) में भी यही चिंता व्यक्त की गई है। इसके निहितार्थ यह हैं कि पाठ्यक्रम एवं अधिगम स्तर के मध्य बढ़ते अंतराल की समय पर पहचान व उपचारात्मक उपाय उठाने की आवश्यकता है, ताकि समय रहते अधिगम स्तर व अधिगम प्रगति को सुधारा जा सके। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में सतत व व्यापक मूल्यांकन को न केवल विद्यालय स्तर ,अपितु उच्च शिक्षा स्तर अपनाने पर बल दिया गया है ताकि शिक्षा को समावेशी, गुणवत्तापूर्ण व समान पहुँच के लक्ष्यों के साथ आगे बढ़ाया जा सके। ❑

राष्ट्रीय शिक्षा नीति एवं मूल्यांकन-पद्धति

प्रो. आलोक कुमार चक्रवाल
कुलपति, गुरु घासीदास विश्वविद्यालय, बिलासपुर (छ.ग.)

किसी भी स्कूली व्यवस्था के सुचारू संचालन के लिए सबसे जरूरी है कि विद्यार्थियों की पढ़ाई के मूल्यांकन का स्तर उत्तम हो। एक ऐसी मूल्यांकन व्यवस्था हो जो मान्य, भरोसेमंद, निष्पक्ष हो तथा जिसमें भिन्न-भिन्न क्षमता वाले बच्चों के लिए समानता का भाव हो। हालांकि वर्तमान में देश की अधिकांश स्कूली व्यवस्था में मूल्यांकन के पैमाने परीक्षाएँ या टेस्ट होते हैं जो सिर्फ विषयों पर उनकी पकड़ का आकलन कर पाते हैं जिससे विद्यार्थियों की संपूर्ण सामर्थ्य का पूरी तरह से आकलन नहीं हो पाता। ऐसी व्यवस्था से विद्यार्थियों में अनावश्यक दबाव, तनाव तथा बेचैनी बढ़ती है तथा शिक्षा का लक्ष्य सिर्फ मुख्य परीक्षाओं में उच्च अंक हासिल करने तक सिमट जाता है।

राष्ट्रीय स्तर की कई समितियों एवं नीतियों ने इस पहलू को उजागर किया है कि परीक्षाओं में पठन सामग्री बहुत अधिक होती है जिससे रटन्त होती है और स्कूलों में पढ़ाया जाने वाला पाठ्यक्रम पूरा भी नहीं हो पाता। ऐसी स्थिति में उत्तम शिक्षा देने की उनकी क्षमता का सही आकलन नहीं हो पाता।

आज मूल्याकंन की ऐसी प्रगतिशील व्यवस्था की जरूरत है जिससे स्कूलों में गुणवत्तापूर्ण शिक्षा देने का रास्ता बन सके। मूल्यांकन व्यवस्था और अधिक संपूर्ण होनी चाहिए जो केवल पुस्तकों में पढ़े गए पाठ का मूल्यांकन न करें बल्कि बच्चों की विश्लेषण क्षमता, पैनी सोच, रचनात्मकता, सामाजिक-आर्थिक कौशल आदि का भी मूल्यांकन कर सके। इस संदर्भ में राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) 2020 में मूल्यांकन के उद्देश्य, प्रारूप तथा कार्यान्वयन में कुछ मूलभूत सुधार के सुझाव दिए गए हैं। इसकी शुरुआत हमारी स्कूली व्यवस्था में मूल्यांकन की मूलभूत संस्कृति से होनी चाहिए। इसे अधिक रचनात्मक, विकासात्मक तथा सीखने पर केंद्रित होना चाहिए। मूल्यांकन एक सतत प्रक्रिया होनी चाहिए जो यह समझ सके कि बच्चे कैसे सोचते और पढ़ते हैं। विद्यार्थियों ने क्या सीखा इसके आकलन से प्राप्त साक्ष्यों का उपयोग इस विश्लेषण और विवेचना के लिए होना चाहिए कि विद्यार्थियों की सीखने से जुड़ी जरूरतों को बेहतर ढंग से कैसे पूरा किया जाए। ऐसी सतत आकलन व्यवस्था से शिक्षक भी आत्ममंथन कर सकेंगे कि उनकी शिक्षण शैली कितनी कारगर है और जान सकेंगे कि अपनी शैली में उन्हें क्या और कैसे बदलाव करना है। यह स्कूलों की प्रक्रियाओं, उनकी संस्कृति तथा पाठ्यचर्या पर रोशनी डालेगी कि वे सिखाने के लिहाज से किस स्तर पर हैं। व्यवस्थित स्तर पर ध्यान पूर्वक बनाई गई और कार्यान्वित आकलन प्रक्रिया से नीति-निर्माताओं

मूल्याकंन की ऐसी प्रगतिशील व्यवस्था की जरूरत है जिससे स्कूलों में गुणवत्तापूर्ण शिक्षा देने का रास्ता बन सके। मूल्यांकन व्यवस्था और अधिक संपूर्ण होनी चाहिए जो केवल पुस्तकों में पढ़े गए पाठ का मूल्यांकन न करें बल्कि बच्चों की विश्लेषण क्षमता, पैनी सोच, रचनात्मकता, सामाजिक-आर्थिक कौशल आदि का भी मूल्यांकन कर सके। इस संदर्भ में राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) 2020 में मूल्यांकन के उद्देश्य, प्रारूप तथा कार्यान्वयन में कुछ मूलभूत सुधार के सुझाव दिए गए हैं। इसकी शुरुआत हमारी स्कूली व्यवस्था में मूल्यांकन की मूलभूत संस्कृति से होनी चाहिए।

को विशेष भौगोलिक एवं विविध सामाजिक-आर्थिक समूहों में पढ़ाई के स्तर के साथ तंत्र के समग्र प्रदर्शन की जानकारी मिलेगी। सीखने का सामर्थ्य देने की मूल्यांकन की भूमिका को प्रधानता मिलनी चाहिए। इसके लिए इसमें शामिल सभी हितधारकों, शिक्षकों, स्कूलों, अभिभावकों और तंत्र को यह समझना होगा कि मूल्यांकन का उद्देश्य विद्यार्थियों को सीखने में समर्थ बनाना और शिक्षा के लक्ष्यों को साकार करने में मदद देना है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) 2020 में बोर्ड परीक्षाओं का कायाकल्प करने हेतु भी कुछ ठोस सुझाव दिए गए हैं। किसी भी प्रभावकारी स्कूली व्यवस्था में प्रमाणन का विश्वसनीय एवं मजबूत तंत्र होना चाहिए। बोर्ड 10वीं 12वीं वर्ष की स्कूली शिक्षा के बाद प्रणाम प्रमाणन देते हैं इतने वर्षों में नीतियों में बोर्ड परीक्षाओं के डिजाइन तथा कार्यान्वयन को लेकर कुछ प्रमुख मुद्दों को उठाया गया और विशिष्ट सुझाव दिए गए इन एपी 2020 बोर्ड परीक्षाओं को पुणे संरक्षण चरित करने का सुझाव देती है। जो उन्हें और अधिक प्रमाणित बनाए शैक्षिक तनाव एवं दबाव कम करें और कोचिंग संस्कृति को हतोत्साहित करें। बोर्ड परीक्षा में मुख्य तौर पर रिटर्न क्षमता से ज्यादा मूलभूत सामर्थ्य का आकलन होना चाहिए ऐसी प्रमाणन शिक्षाओं को अध्ययन की किसी एक साथ में सीखी

गई विषय वस्तु या किताबी सामग्री के ज्ञान को आँकने के बजाय संपूर्ण अध्ययन तथा विकास पर अधिक ध्यान देना चाहिए। इस संदर्भ में इन 2020 बोर्ड परीक्षाओं से जुड़े वर्तमान तनाव एवं बेचैनी को कम करने हेतु विद्यार्थियों को विकल्प और उपाय देती है।

उपर्युक्त सुधार सुझाव के साथ यूपी 2020 में समग्र 3600 बहुआयामी रिपोर्ट की जरूरत पर भी चर्चा की गई जिसमें संख्यात्मक भावात्मक तथा मनो प्रेरक क्षेत्रों में हर विद्यार्थी की विशिष्टता के साथ-साथ प्रगति का विस्तार से उल्लेख किया गया है। खड़ा किया उन सुधारों का दायरा व्यापक प्रतीत होता है पर लागू होने पर यह सुधार श्रेष्ठ आचरण व्यवस्था की दिशा में बढ़ने का आधार तैयार करेंगे। इस लक्ष्य को हासिल करने के लिए कुछ सिद्धांतों का पालन करना होगा जिन का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है –

पहला सिद्धांत हित धारकों के बीच आम सहमति बनाना है हमारी शिक्षा व्यवस्था में संस्थाओं तथा मुक्त धारकों के बीच संवाद का अक्सर अभाव रहता है। इस तरह बातचीत के नए विचार उभर कर आते हैं जिससे सकरी गठजोड़ बनते हैं। संस्थाओं को सक्रियता से सहयोग तथा संवाद जारी रखना चाहिए। उदाहरण के लिए एनसीईआरटी, एस सीईआरटी और और राज्यों के बोर्ड को पाठ्यचर्या पाठ्यक्रम तथा संबंधित आंकड़ों में सुधार हेतु मिलकर काम करना चाहिए। किसी एक में सुधार न

होने से दूसरे में सुधार करना असंभव है। पाठ्यचर्या के लक्ष्य तथा आकलन प्रक्रियाओं के बीच गहरे सामंजस्य को समझना भी बहुत महत्त्वपूर्ण है। इसलिए यह जरूरी है कि यह दृष्टिकोण विकसित करने वाली संस्थाएँ मिलकर काम करें। यह सहयोग केवल सरकारी संस्थाओं तक सीमित नहीं रहना चाहिए। ऐसे निर्णय करते समय प्रतिष्ठित संगठनों, विश्वविद्यालय तथा शोधकर्ताओं से भी सलाह दी जानी चाहिए।

दूसरा सिद्धांत यह है कि हमें हित धारकों के बीच यह सहमति पैदा करनी होगी कि ऐसी कौन सी मूलभूत ऑरेंज मान्यताएँ हैं जिनका मूल्यांकन विभिन्न आकलन प्रणालियों के जरिए करना आवश्यक है। इसके लिए हमें सभी विषयों के लिए सीखने के प्रासंगिक मान को क्षमता ढांचे तथा मूल्यांकन प्रक्रियाओं की जरूरत है। अध्ययन मानकों से हित धारकों को साझा अनुदेश की जानकारी मिलेगी इन मानकों में उच्च स्तरीय चिंतन कौशल 21वीं सदी के कौशल तथा उन सामाजिक आर्थिक कौशलों को ध्यान में रखा जाना चाहिए जो विद्यार्थियों के संपूर्ण विकास के लिए जरूरी है। यह मानक और ढाँचे ऐसे होने चाहिए जिनसे शिक्षकों, पाठ्यचर्या निर्धारकों तथा बोर्ड परीक्षा प्रश्न पत्र बनाने वालों को उपर्युक्त और प्रासंगिक दक्षताओं के मूल्यांकन के लिए समुचित दिशा मिल सके। इससे सभी बड़ों के बीच समकक्षता का आएगी, जिसका हमारी वर्तमान स्कूली शिक्षा व्यवस्था में अभाव है। मानकों और प्रक्रियाओं के ऐसे साझा दायरों के अभाव में विभिन्न शिक्षा बोर्डों के विद्यार्थियों के प्रदर्शन की तुलना करना व्यावहारिक रूप से असंभव है। इन मानकों और प्रक्रियाओं का निर्धारण मिलकर करना तथा मुख्य निर्धारकों के बीच प्रचारित करना आवश्यक है।

तीसरा सिद्धांत यह है कि बोर्डों के संदर्भ में नीति में किसी तरह के बदलाव करते समय कक्षा तथा स्कूल दोनों के स्तर पर और उसके साथ-साथ व्यवस्था के स्तर पर मूल्यांकन में बदलाव करना होगा अतः इन बदलावों को सफलतापूर्वक अपनाने के लिए जरूरी है कि शिक्षकों, अभिभावकों, स्कूल प्रधानाचार्य, ब्लॉक अभिलेख, जिला अधिकारियों आदि मुख्य हित धारकों के बीच जागरूकता पैदा की जाए। बोर्ड नीति में किसी भी बदलाव के पीछे उचित एवं प्रेरणा के बारे में इन बदलावों से प्रभावित धारकों को स्पष्टता से बताया जाना चाहिए।

चौथा सिद्धांत यह है कि आकलन एवं मूल्यांकन के कार्य का दायित्व वाहन करने वाले हित धारकों को आकलन के विभिन्न पहलुओं के बारे में क्षमता निर्माण की सुविधा निरंतर दी जाती रहे। शिक्षकों को अधिक विश्वसनीय तथा प्रामाणिक आकलन करने का सामर्थ प्रदान करने हेतु संपूर्ण मूल्यांकन दिशा निर्देश पुस्तिका तथा नियमावली मूल्यांकन के अनुकरणीय साधन तथा प्रक्रिया उपलब्ध कराना भी आवश्यक है। प्रामाणिक एवं विश्वसनीय मूल्यांकन प्रक्रिया के निर्धारण एवं उपयोग की शिक्षकों की क्षमता को नियमित प्रशिक्षण के जरिए बढ़ाया जाना चाहिए। मूल्यांकन के परिणामों का विश्लेषण करने, रिपोर्ट देने तथा उनका उपयोग करने के लिए शिक्षकों की क्षमता विकसित करना भी आवश्यक है। सबसे पहले ही विद्यार्थियों का मूल्यांकन करते हैं इसलिए उन्हें हर बच्चे की व्यक्तिगत जरूरतों के आधार पर सिखाने सीखने और मूल्यांकन करने की प्रक्रिया के बारे में निर्णय लेने की स्वतंत्रता होनी चाहिए। अपनी स्वायत्तता का उपयोग करने के लिए शिक्षक को स्कूल प्रधान के समर्थन की जरूरत होती है उनसे मेरे भरोसे समर्थन तथा प्रोत्साहन से शिक्षकों का मनोबल बढ़ेगा और वे नए दृष्टिकोण को अपनाने की दिशा में और अधिक विश्वास के साथ बढ़ सकेंगे।

इन सुधारों पर अमल करने के लिए शिक्षकों के अलावा प्रश्न पत्र बनाने वालों, बोर्ड परीक्षाओं के मूल्यांकन कर्ताओं तथा परीक्षा नियंत्रकों के प्रशिक्षण एवं क्षमता निर्माण की व्यवस्था भी होनी चाहिए। मूल्यांकन प्रक्रिया में

सुधारों को सुसाध्य करने के लिए सीबीएसई निरंतर बदलाव कर रहा है। बोर्ड ने 2020 में शिक्षण पद्धति तथा मूल्यांकन प्रक्रिया में सुझाए गए विभिन्न सुधारों के बारे में शिक्षकों को प्रशिक्षण दिया है। बोर्ड परीक्षाओं में प्रमुख विषयों को शामिल करने हेतु बोर्ड ने पिछले कुछ वर्षों में विभिन्न ठोस उपाय अपनाए है। परीक्षा विधियों की विश्वसनीयता एवं प्रामाणिकता का मूल्यांकन करने के लिए उसने अपने प्रमाणन परीक्षा प्रश्न पत्रों की व्यापक समीक्षा की है।

दक्षता आधारित शिक्षा प्रणाली को लागू करने में शिक्षकों को समर्थन देने के लिए माध्यमिक तथा उच्च माध्यमिक स्तर पर विभिन्न विषयों के लिए सीखने के मानकों के ढाँचे को एनसीईआरटी के शिक्षा परिणामों के अनुरूप विकसित किया गया है। इसके अधिकांश के विभिन्न पहलुओं में विद्यार्थियों की प्रगति पर बराबर नजर रखने हेतु संपूर्ण प्रगति कार्ड बनाए गए हैं। शैक्षिक वर्ष में केवल एक बार अंकों के आधार पर बच्चों की उपलब्धि नाचने वाले पारंपरिक रिपोर्ट कार्ड की बजाय एचपीसी घर और स्कूलों के बीच एक महत्त्वपूर्ण कड़ी स्थापित करेगा तथा संख्यात्मक, भावात्मक एवं मनो प्रेरक क्षेत्रों में प्रत्येक विद्यार्थी की विशिष्टता को बताएगा। परीक्षा विकास एवं मानकीकरण की माँगों तथा प्रक्रियाओं में बोर्ड कर्मचारियों में क्षमता के निर्माण की दिशा में भी प्रयास किए गए हैं। प्रश्न पत्र तैयार करने वालों की सुविधा के लिए पुस्तिकाएँ निर्देश पुस्तिकाएँ तथा अन्य संदर्भ सामग्री तैयार की गई। सीबीएसई ने इन बदलाव पर अमल करने के लिए विभिन्न सरकारी एवं मुनाफा कमाने वाले संस्थानों के साथ गठजोड़ किया है।

दक्षता आधारित शिक्षा प्रणाली को लागू करने में शिक्षकों को समर्थन देने के लिए माध्यमिक तथा उच्च माध्यमिक स्तर पर विभिन्न विषयों के लिए सीखने के मानकों के ढाँचे को एनसीईआरटी के शिक्षा परिणामों के अनुरूप विकसित किया गया है इसके अधिकांश के विभिन्न पहलुओं में विद्यार्थियों की प्रगति पर बराबर नजर रखने हेतु संपूर्ण प्रगति कार्ड बनाए गए हैं।

मूल्यांकन प्रक्रिया सुधारों पर अब कई दशकों से चर्चा चल रही है। पहले की रिपोर्ट एवं नीतियों में सुधार के जिन प्रमुख क्षेत्रों की ओर इशारा किया गया है। एनईपी 2020 में उन्हें दोहराया जाए। अत: हमें मौजूदा आधार पर आगे निर्माण करना होगा। पहले की सफल विधियों से सीखना होगा। अब तक जो सबक मिले हैं वह महत्त्वपूर्ण हैं। देश भर में मूल्यांकन व्यवस्था को जैसे समझने और उपयोग करने के मौजूदा तरीकों को बदलने के लिए हमारे प्रयासों तथा समाधान में रचनात्मकता एवं नई सोच होनी चाहिए। परिकल्पित प्रक्रियाओं एवं व्यवस्थाओं की दिशा में निरंतर प्रयत्नशील रहना सभी कार्यों का आधार होना चाहिए। श्रेष्ठ पद्धतियों का भंडार बनाने के साथ-साथ संस्थाओं के बीच संवाद एवं सामूहिक कार्रवाई से प्रयासों को एकजुट किया जा सकेगा।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 अब तक शिष्यों के संपूर्ण विकास को प्रोत्साहित कर परीक्षा में सुधार पर जोर देता है। इसका उद्देश्य है कि विद्यार्थियों के लिए परीक्षा व्यवस्था में सुधार किया जाए, ताकि परिणाम बेहतर हो सके। अंक देने की ऐसी नई योजना जो रचनात्मकता सहित उपर्युक्त उत्तर को प्राथमिकता दें तथा विद्यार्थियों में तनाव कम करने हेतु दो अस्त्रों पर विषयों की पेशकश उच्च माध्यमिक स्तर पर गणित का विकल्प प्रश्नोत्तरी, मौखिक परीक्षा, प्रोजेक्ट पोर्टफोलियो तथा विशेष संवर्धन गतियों जैसी दक्षताओं के आधार पर आंतरिक मूल्यांकन खेलों में प्रतिभाओं को प्रोत्साहन देने हेतु परीक्षाओं के दौरान खिलाड़ियों को सहायता देना, तनाव कम करने के लिए कला का उपयोग विफल शब्द को छोड़कर अनिवार्य पुनरावृति शब्द का उपयोग करने का निर्णय लिया है। ❑

शिक्षा व्यवस्था में परीक्षा का महत्त्व तो बहुत है परंतु जो परीक्षा ली जाए वह सकारात्मक रूप से ले जानी चाहिए। विद्यार्थियों के विकास का मूल्यांकन मानव विकास के सभी पहलुओं को शामिल करते हुए उपयुक्त तरीकों से किया जाना चाहिए और न केवल वर्तमान समय की परीक्षा प्रणाली में प्रचलित बौद्धिक विकास को देखते हुए। भारत में परीक्षा प्रणाली का मुख्य ध्यान ज्ञान पक्ष पर होता है।

शिक्षा व्यवस्था में परीक्षाओं का महत्त्व

प्रो. प्रवीन कुमार मिश्र
संकायाध्यक्ष,
सामाजिक विज्ञान संकाय,
गुरु घासीदास विश्वविद्यालय,
बिलासपुर (छ. ग.)

शिक्षा एक उत्प्रेरक उपकरण है जिसमें एक राष्ट्र के युवाओं और बच्चों के वर्तमान और भविष्य को बदलने की पूर्ण ताकत है। किसी देश के सुचारू संचालन और निरंतर विकास के लिए पूर्व सुसज्जित शिक्षा एक पूर्वापेक्षा है। एक अच्छी तरह से स्थापित शिक्षा प्रणाली एक राष्ट्र के लिए हमेशा एक बिल्डिंग ब्लॉक के रूप में कार्य करती है। जिस पर संपूर्ण राष्ट्र की सामाजिक-आर्थिक संरचना का निर्माण होता है।

शिक्षा एक ऐसा शब्द है जिसे सुनकर हम बड़े हुए हैं। बचपन की शुरुआत से ही इस क्षण तक, हम शिक्षा और इसकी आवश्यकता और महत्त्व से घिरे हुए हैं। मनुष्य के जीवन में जितना महत्त्व कपड़े, हवा, पानी और भोजन का होता है, उतना ही महत्त्व शिक्षा का है। इसीलिए हमेशा से यही कहा जाता है कि शिक्षा का मानव जीवन में बहुत महत्त्व है। शिक्षा ही एक ऐसा माध्यम है जिससे मनुष्य अपने दिमाग का पूर्ण विकास कर सकता है। वर्तमान समय में शिक्षा का महत्त्व बहुत आगे बढ़ गया है और लगातार बढ़ता ही जा रहा है। शिक्षा के बिना एक आदमी नींव के बिना एक इमारत की तरह है। शिक्षा व्यक्ति की सोच का पोषण करती है और उन्हें जीवन में सोचने, कार्य करने और आगे बढ़ने की क्षमता प्रदान करती है। शिक्षा लोगों को सशक्त बनाती है और उन्हें काम के संबंधित क्षेत्र में रहने और अनुभव के सभी पहलुओं में कुशल बनाने में मदद करती है। शिक्षा एकमात्र मूल्यवान संपति है जिसे मनुष्य प्राप्त कर सकता है। शिक्षा एकमात्र आधार है जिस पर मानव जाति का भविष्य निर्भर करता है। हमारे विचार का निर्माण हमारे जीवन, हमारे आचरण के अनुरूप ही होता है। हमारे जीवन तथा आचरण का मूल आधार है हमारी शिक्षा। शिक्षा हमारे जीवन का हिस्सा है। साथ ही साथ शिक्षा राष्ट्र के व्यक्तिगत सामाजिक और आर्थिक विकास के लिए महत्त्वपूर्ण है। स्त्री हो या पुरुष दोनों के लिए शिक्षा समान रूप से आवश्यक है। क्योंकि दोनों ही मिलकर स्वस्थ और शिक्षित समाज का निर्माण करते हैं। केवल शिक्षित व्यक्ति ही राष्ट्र का निर्माण करके इसे सफलता और प्रगति के रास्ते की ओर ले जा सकता है।

शिक्षा का मतलब केवल डिग्री पानी ही नहीं होता बल्कि शिक्षा आपको अपने पैरों पर खड़ा होना सिखाती है। इस बात पर नेल्सन मंडेलाजी की एक बात याद आती है, उन्होंने कहा था कि ''शिक्षा सबसे शक्तिशाली हथियार है जिसका प्रयोग आप दुनिया को बदलने के लिए कर सकते हैं।''

आज शिक्षा के साथ परीक्षा शब्द अनिवार्य रूप से जुड़ चुका है। शिक्षा व्यवस्था में परीक्षा के संबंध में लोगों का मानना है कि परीक्षाएँ छात्रों को जाँचने की सर्वश्रेष्ठ पद्धति है। परीक्षा से हमारी कमी और हमारी ताकत के बारे में पता चलता है।

शिक्षण, अधिगम तथा परीक्षा शिक्षा रूपी भवन के तीन प्रमुख स्तंभ है। इसमें से किसी एक भी स्तंभ के कमजोर होने पर शिक्षा रूपी भवन का सुचारु रूप से टिकना असंभव है। परीक्षा प्रणाली द्वारा सफलता और असफलता का आकलन किया जाता है। वास्तव में प्रत्येक शिक्षक यह जानना चाहता है कि उसके द्वारा पढ़ाया गया विद्यार्थी कहाँ तक ग्रहण करने में सफल हुआ है। परीक्षा उसकी प्रगति, रुचि एवं योग्यता का मापन करती है। 'परीक्षा' शब्द आंतरिक एवं बाह्य मूल्यांकन दोनों को आत्मसात किए हुए है। विद्यार्थी की प्रगति एवं शैक्षिक उपलब्धि ज्ञात करने के साथ-साथ परीक्षा के द्वारा शिक्षक को अपने शिक्षण का प्रभाव भी ज्ञात हो जाता है। शिक्षा व्यवस्था में परीक्षा समाज को अपनी भावी पीढ़ी के शैक्षिक स्तर के प्रति सजग करता है। साथ ही साथ अध्यापक एवं विद्यार्थी दोनों क्रियाशील रहते हैं।

शिक्षा व्यवस्था में परीक्षा के महत्त्व को निम्न बिंदुओं द्वारा समझा जा सकता है -

विद्यार्थी के ज्ञानार्जन की जाँच करना

परीक्षा के माध्यम से यह जानने का प्रयास किया जाता है कि निश्चित पाठ्यक्रम में विद्यार्थियों ने कितना ज्ञान अर्जित किया है, वह ज्ञान को अर्जित करने में कितना सक्षम है, उसकी योग्यताओं का किस सीमा तक विकास हुआ है और उनके अनुभव तथा ज्ञान की भाषा कितनी है?

शिक्षण विधियों की सफलता की जाँच करना

परीक्षा के द्वारा शिक्षक जिन शिक्षण विधियों का प्रयोग करता है उसकी भी जाँच की जाती है। शिक्षण प्रविधियों की सफलता एवं असफलता की जाँच परीक्षा से प्राप्त परिणाम द्वारा संभव है।

विद्यार्थी को अभिप्रेरणा प्रदान करना

परीक्षा परिणामों से विद्यार्थी को आत्म मूल्यांकन का अवसर प्राप्त होता है। जिससे उसमें आत्मप्रेरणा उत्पन्न होती है। जिसके फलस्वरूप वह ज्यादा परिश्रम करते हैं। परीक्षा परिणामों से ही विद्यार्थियों में प्रतिस्पर्धा की स्वस्थ भावना जागृत होती है जो आगे बढ़ने के एवं सदैव कुछ नया सीखने के लिए प्रोत्साहित करती है।

पाठ्यक्रम के स्वरूप की जाँच करना

परीक्षा के द्वारा पाठ्यक्रम के स्वरूप की जाँच भी की जा सकती है। पाठ्यक्रम में जो दोष होते हैं उन्हें दूर करने का प्रयास किया जाता है अथवा पाठ्यक्रम को संशोधित किया जाता है।

परीक्षा को लेकर अवधारणाएँ

लोगों द्वारा परीक्षाओं से जुड़ी दो तरह की अवधारणाएँ दी जाती हैं -

सकारात्मक अवधारणाएँ

बहुत से लोगों का मनाना यह है कि परीक्षा प्रणाली की वजह से विद्यार्थियों की काबलियत को परखा जा सकता है। बच्चों में आत्मविश्वास एवं मनोबल का विकास होता है। परीक्षा के कारण बच्चे गंभीरता से पढ़ाई लिखाई करते हैं। उनमें अनुशासन विकसित होता है। परीक्षा प्रणाली में विद्यार्थियों के साथ-साथ शिक्षक का भी आकलन किया जाता है। शिक्षक ने अपने कर्तव्यों का कितनी सार्थकता के साथ प्रयोग किया है, ज्ञात होता है। आज की दुनिया में परीक्षा परिणाम से ही यह अंदाजा लगा लिया जाता है कि कौन सा स्कूल या कॉलेज टॉप पर आते हैं।

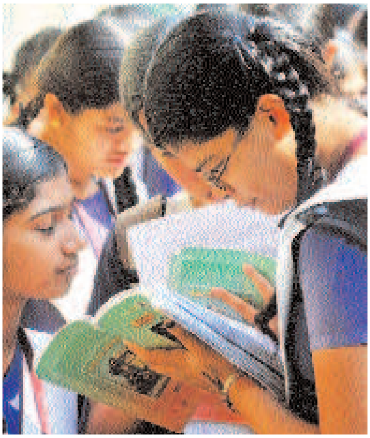

नकारात्मक अवधारणाएँ

परीक्षा प्रणाली को लेकर कुछ लोगों का यह मनना होता है कि केवल परीक्षा पद्धति पर्याप्त नहीं है किसी की काबलियत पहचानने के लिए। परीक्षा प्रणाली के द्वारा बच्चे बहुत दबाव में आ जाते हैं, यदि परिश्रम के बाद भी वह श्रेष्ठ अंकों से उत्तीर्ण नहीं हो पाते तो कुछ बच्चे गलत कदम उठा लेते हैं। साथ ही साथ पढ़ाई से भी उनका मन उठ जाता है। भारत की परीक्षा प्रणाली इतने वर्षों से अपरिवर्तित बनी हुई है। एक छात्र की योग्यता एक परीक्षा द्वारा तय की जाती है। इस प्रणाली में, पूर्व शैक्षिक सत्र में छात्रों के लिए प्रदर्शन के लिए कोई स्थान नहीं है। परीक्षा में अधिक से अधिक अंक लाना ही विद्यार्थियों का एकमात्र उद्देश्य बन गया है।

उपसंहार

उपर्युक्त विवेचना से यह स्पष्ट होता है कि शिक्षा व्यवस्था में परीक्षा का महत्त्व तो बहुत है परंतु जो परीक्षा ली जाए वह सकारात्मक रूप से ले जानी चाहिए। विद्यार्थियों के विकास का मूल्यांकन मानव विकास के सभी पहलुओं को शामिल करते हुए उपयुक्त तरीकों से किया जाना चाहिए और न केवल वर्तमान समय की परीक्षा प्रणाली में प्रचलित बौद्धिक विकास को देखते हुए। भारत में परीक्षा प्रणाली का मुख्य ध्यान ज्ञान पक्ष पर होता है। और इस प्रकार कौशल और दृष्टिकोण की उपेक्षा की जाती है। परीक्षा से ज्ञान की जाँच करनी चाहिए किंतु, उन्हें प्रतिभा जाँच का एकमात्र मध्यम नहीं बनाना चाहिए। प्रत्येक छात्र एक दूसरे छात्र से भिन्न होता है। अत: उसकी व्यक्तिगत रुचि और योग्यताओं का भी ध्यान रखना चाहिए। अभिभावकों एवं शिक्षकों को छात्रों पर अनावश्यक दबाव नहीं डालना चाहिए। यदि परीक्षाएँ उचित ढंग से आयोजित की जाए, तो वे प्रतिभाशाली अध्ययन को बढ़ाव दे सकती है। ❑

सर्वांगीण विकास में रचनात्मक मूल्यांकन की भूमिका

अमन आकाश

पीएच.डी. शोधार्थी
(पत्रकारिता एवं जनसंचार)
हिमाचल प्रदेश केन्द्रीय
विश्वविद्यालय, धर्मशाला

शिक्षा पूर्ण मानव क्षमता को प्राप्त करने, एक न्यायसंगत और न्यायपूर्ण समाज के विकास और राष्ट्रीय विकास को बढ़ावा देने के लिए मूलभूत आवश्यकता है। गुणवत्तापूर्ण शिक्षा तक सार्वभौमिक पहुँच प्रदान करना वैश्विक मंच पर सामाजिक न्याय और समानता, वैज्ञानिक उन्नति, राष्ट्रीय एकीकरण और सांस्कृतिक संरक्षण के संदर्भ में भारत की सतत प्रगति और आर्थिक विकास की कुंजी है। भारत द्वारा 2015 में अपनाए गए सतत विकास एजेंडा 2030 के लक्ष्य 4 (एसडीजी 4) में परिलक्षित वैश्विक शिक्षा विकास एजेंडा के अनुसार विश्व में 2030 तक 'सभी के लिए समावेशी और समान गुणवत्तायुक्त शिक्षा सुनिश्चित करने और जीवन-पर्यंत शिक्षा के अवसरों को बढ़ावा दिए जाने' का लक्ष्य है (राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020)।

वस्तुतः शिक्षा का मूल उद्देश्य व्यक्ति निर्माण के माध्यम से एक ऐसे समावेशी समाज का निर्माण करना है, जिस समाज में किसी प्रकार की विषमता ना हो। वैज्ञानिक चेतना से परिपूर्ण वह समाज राष्ट्रीय एकता व उन्नति का नेतृत्त्व करता हो। शिक्षा आजीवन चलने वाली प्रक्रिया है। अपने वातावरण की हर इकाई से हम सदैव कुछ न कुछ सीखते हैं और प्रेरित होते हैं। शिक्षा को अकादमिक डिग्रियों तक सीमित कर देना इसकी परिभाषा को न्यून कर देना है। शिक्षा को महज रोजगार का साधन मान लेना भी इसके उद्देश्यों के विशाल वटवृक्ष को गमले का बोनसाई बना देना है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने अपनी परिभाषा में शिक्षा के माध्यम से आर्थिक विकास का एक लक्ष्य तो रखा है पर उससे पहले सामाजिक न्याय और समानता, वैज्ञानिक उन्नति व सांस्कृतिक संरक्षण की बात भी कही है। असल में शिक्षा मनुष्य, समाज व देश के बहुआयामी विकास का मार्ग प्रशस्त करती है।

लम्बे समय से महज आर्थिक सुरक्षा का उद्देश्य सामने रखकर प्राप्त की जाने वाली शिक्षा व्यवस्था ने शिक्षार्थियों को मशीन बनाकर रख दिया है। छोटी उम्र से ही सबसे आगे रहने की होड़ ने बच्चों में अनावश्यक अदृश्य दवाब बनाया है। परिवार व समाज बच्चों की प्रतिभा को परीक्षा परिणाम के प्राप्तांकों से आंकने लगे हैं। परिणामस्वरूप स्वस्थ प्रतिस्पर्धी माहौल की जगह भय का वातावरण निर्मित हो रहा है। पाँचवीं-छठी कक्षा के विद्यार्थियों द्वारा परीक्षा में अपेक्षाकृत प्रदर्शन ना किए जाने पर आए दिन उनकी आत्महत्या की खबरें आ रही हैं। इस तरह के वातावरण का निर्माण हमने किया है। शैक्षणिक वातावरण के संदर्भ में गिजुभाई बधेका के विचारों को उद्धृत करना अत्यंत आवश्यक हो जाता है। शिक्षाविद् बधेका के अनुसार, बच्चों को उन्मुक्त वातावरण में, बिना किसी दबाव के अधिक अच्छे ढंग से शिक्षित किया जा सकता है। अगर बच्चों को डाँट-फटकार से भयभीत रखा जाएगा तो वह अपने व्यक्तित्त्व का विकास नहीं कर सकता। शिक्षकों को बच्चों के

साथ स्नेह एवं प्रेमपूर्वक व्यवहार रखना चाहिए तभी वह सही दिशा-निर्देश में अपना विकास कर सकता है। गिजुभाई ने शिक्षा पद्धति में बालकेंद्रित पाठ्यक्रम हेतु महत्त्वपूर्ण सुझाव भी दिए। वो विद्यालयी पाठ्यक्रम में बच्चों को अनावश्यक पुस्तकीय भार व विषयों के भार से मुक्त रखना चाहते थे। साथ ही गिजुभाई शैक्षणिक पाठ्यक्रमों में आध्यात्मिकता का पुट देना चाहते थे तथा आध्यात्मिकता के माध्यम से सत्य व प्रेम के प्रति निष्ठा जैसे गुणों का विकास करना चाहते थे। उनके सुझाए पाठ्यक्रम में बौद्धिक शिक्षण के साथ शारीरिक शिक्षण व तकनीकी के व्यवहारगत् प्रयोगों का अनुमोदन भी था। प्राथमिक शिक्षण पर विमर्श हो रहा हो तो शिक्षा पर महात्मा गांधी के विचार अग्रणी पंक्ति में स्वयमेव अपना स्थान ग्रहण कर लेते हैं। गांधीजी ज्ञान आधारित शिक्षा के स्थान पर आचरण आधारित शिक्षा के पुरजोर समर्थक थे। उनके अनुसार शिक्षा प्रणाली ऐसी हो जो व्यक्ति को नैतिक बनने हेतु प्रेरित करे। गांधीजी शिक्षा को मानव के सर्वांगीण विकास का सशक्त माध्यम मानते थे। वर्धा शिक्षा योजना के तहत उन्होंने प्रथम सात वर्षों की शिक्षा को नि:शुल्क एवं अनिवार्य करने पर बल दिया था। साथ ही गांधी शिक्षा के माध्यम से स्वावलंबन पर हमेशा बल देते रहे।

इसी प्रकार पाश्चात्य शिक्षाविदों द्वारा कई शिक्षण विधियों का प्रतिपादन किया गया है, जिनमें से एक मूल्यांकन विधि है। शिक्षा के स्तर को बनाए रखने के लिए शैक्षणिक संस्थानों, शिक्षकों व शिक्षार्थियों का सतत मूल्यांकन आवश्यक है। मूल्यांकन से यह ज्ञात होता है कि हमने अपने स्तर में कितनी उत्तरोत्तर वृद्धि की है। शैक्षणिक मूल्यांकन हेतु भारत में कई समितियाँ बनी हैं और अनेक संस्थान कार्य कर रहे हैं। पर ये संस्थान व व्यवस्था अपनी जवाबदेही तय नहीं कर पा रहे। मूल्यांकन ने प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी करने वालों के साथ-साथ अकादमिक शिक्षा ग्रहण करने वाले शिक्षार्थियों पर भी दवाब बनाया है। इसके दुष्परिणाम हमें नियमित देखने को मिल रहे हैं । राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो के अनुसार 2022 में आत्महत्या करने वाले शिक्षार्थियों की संख्या में पिछले पाँच सालों की तुलना में लगातार बढ़ोतरी होती जा रही है। इसमें ज्यादातर आत्महत्या की वज़ह परीक्षा में असफलता, परीक्षा का चिंताएँ व अनावश्यक पारिवारिक दवाब रहे हैं।

भारतीय शिक्षाविदों के अनुसार, वर्गकक्ष परीक्षा के मूल्यांकन से शिक्षार्थियों की बौद्धिक स्तर व उनके भविष्य को आंकना बेमानी है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 ने मूल्यांकन पद्धति में आमूलचूल बदलाव लाया है। विद्यालयी शिक्षा में मूल्यांकन का आधार अंक प्रपत्र पर छपे प्राप्तांक महज नहीं रह गए हैं। नई शिक्षा नीति के अनुसार, मूल्यांकन पद्धति खुद को एक उद्देश्यपूर्ण और विकासोन्मुख प्रक्रिया के रूप में विकसित करेगी। शिक्षार्थियों के मूल्यांकन के कई स्रोत होंगे। नीति निर्धारकों ने शिक्षार्थियों की समस्याओं को ध्यान में रखते हुए ऐसी मूल्यांकन पद्धति की सिफारिश की है, जिसमें बच्चों का सम्पूर्ण व्यक्तित्त्व विकास परक व निरंतर रचनात्मक मूल्यांकन हो सके। बोर्ड परीक्षाओं में विद्यार्थियों के तनाव को लगभग समाप्त करने के लिए वर्ष में दो बार बोर्ड परीक्षा की अनुमति दी जाएगी। रटने की प्रवृत्ति व कोचिंग कल्चर की गलाकाट प्रतिस्पर्धा की जगह आंतरिक मूल्यांकन हेतु शिक्षण अधिगम पर बल दिया जाएगा। शिक्षा के माहौल को आनंदमयी बनाने के प्रयास किए जाएंगे।

शिक्षा का मूल उद्देश्य व्यक्ति निर्माण के माध्यम से एक ऐसे समावेशी समाज का निर्माण करना है, जिस समाज में किसी प्रकार की विषमता ना हो। वैज्ञानिक चेतना से परिपूर्ण वह समाज राष्ट्रीय एकता व उन्नति का नेतृत्त्व करता हो। शिक्षा आजीवन चलने वाली प्रक्रिया है। अपने वातावरण की हर इकाई से हम सदैव कुछ न कुछ सीखते हैं और प्रेरित होते हैं। शिक्षा को अकादमिक डिग्रियों तक सीमित कर देना इसकी परिभाषा को न्यून कर देना है।

किसी भी नीति को सफल व प्रभावी तभी किया जा सकता है जब उस नीति से संबंधित लोग अपनी जवाबदेही को समझें। राष्ट्रीय शिक्षा नीति एक गहन अवलोकन, शोध व लंबे विमर्श के बाद किया जा रहा प्रयास है, जिसके लागू होने से शिक्षा व्यवस्था में क्रांतिकारी परिवर्तन देखने को मिल सकते हैं। पर इसके लिए शैक्षणिक संस्थानों, शिक्षकों, शिक्षार्थियों के साथ अभिभावकों व समाज को भी आगे आना होगा। हमें ऐसे समाज का निर्माण करना होगा जिसमें सफलताओं का पैमाना महज आर्थिक न हो। अपने बच्चों की अन्य बच्चों से तुलना कर उन्हें हीनभावना से ग्रसित न करें। सफलता और असफलता दोनों तरह की परिस्थितियों में उनके अवलंब बनें। बच्चों को मशीनी संयंत्र बनाने की बजाए एक सम्पूर्ण जिम्मेवार नागरिक बनाने की दिशा में प्रेरित करें। कृत्रिम बुद्धिमता (आर्टिफीसियल इंटेलिजेंस) के इस दौर में सफल शिक्षार्थी वही माना जाएगा जो अपनी शिक्षा के माध्यम से परिवार व समाज की जिम्मेदारी, देश की अखंडता, सांस्कृतिक विविधता व सतत विकास कार्यों को संरक्षित करने का कार्य करे। और सफल संस्थान, परिवार व समाज उन्हीं को कहा जाएगा जो शिक्षार्थियों को इस दिशा में बढ़ने हेतु प्रोत्साहित करे। ❑

Pattern of Evaluation in Our Education System

Prof. Geeta Bhatt

Director,
Non-Collegiate Women's
Education Board,
University of Delhi

Dr. R.K. Mukherjee in the book 'Ancient Indian Education' writes that Learning in India through the ages had been prized and pursued not for its own sake, if we may so put it, but for the sake, and as a part, of religion. It was sought as the means of self-realization, as the means to the highest end of life viz. Mukti or Emancipation. A teacher (Guru) has been most revered in the ancient Indian scriptures. In the scripture 'Mundak-Upanishad', it is stated that "Not by self-study is the atman (soul of an individual) realized, not by mental power; not by amassing much information". Indian teachers were well known for their exposition and depth of the subject and students from far off lands used to undertake a perilous journey to come to India to not only understand the scriptures but also translate them in their languages.

The education curricula primarily focussed on rights and duties where the students, irrespective of their background had to live by the strict norms of the Gurukul. Training of all the five senses, with the objective to condition moral attributes was a primer to learn higher knowledge. Physical education too was an important curricular area and pupils participated in krida (games, recreational activities), vyayamaprakara (exercises), dhanurvidya (archery) for acquiring martial skills, and yogasadhana (training the mind and body) among others.

In order to assess pupils' learning, shastrartha (learned debates) were organised. Pupils at an advanced stage of learning guided younger pupils. There also existed the system of peer learning, like you have group/peer work. Kautilya, also known as Chanakya was one of the greatest Indian exponents of ancient Indian political thought, diplomacy, economy and art of governance. He wrote 'Arthashastra' between 321-296 BC and laid down the details

and importance of restraint- of the organs of senses, on which success in study and discipline depends and can be enforced by abandoning lust, anger, greed, vanity, haughtiness, and overjoy.

In the medieval period, religious places also hosted as educational hubs in India. Pietradellavalle, an Italian traveller who visited Persia and other countries, came to India in 1623 and described in his letters that he witnessed at the porch of a village temple in South India; little boys were learning arithmetic where the master was teaching all of them together, singing musically with a certain continued tune which made a deep impression upon the memory. G.W. Leitner, the founder of Government College, Lahore in his publication 'Indigenous Education in the Punjab' in 1882 wrote that Punjab Province had an estimated 3,30,000 pupils learning "all the sciences in Arabic and Sanskrit schools and colleges, as well as Oriental literature, Oriental law, Logic, Philosophy and Medicine taught to the highest standard. He writes that there was not a mosque, a temple, a dharmsala that did not have a school attached to it. The Punjab was way ahead of many European nations in literacy. However, after the mutiny of 1857 against the British, these institutions were systematically destroyed on the pretext of crushing the rebellion. Leitner states that after the mutiny, by 1880, just 1,90,000 pupils were left in native schools.

The examination system during the British colonial rule is observed in the reports of The Bombay Native Education Society's report (1825-26) which mentions about the exam and its results. The annual general meeting of the society held in 1831 for the first time reported to have held the examination of the boys of the English and Vernacular schools of the society in the city, conducted in the presence of the gentlemen assembled in the meeting. This mode of examining scholars in public meetings by men not directly connected with schools became a common feature of the school system in the early years of the British Rule. The main objective was to convince the native community of the excellence of the new system of schooling. The presence of high placed officers was to impress upon the boys who also obtained prizes at the hands of these high officers and they were particularly marked for future prospects of Government service or higher education.

An Indian Education Commission was constituted under Chairmanship of William Hunter in the year 1882 and in its recommendations, the commission recommended that grants-in-aid for the indigenous schools should be on the basis of "Payments by Results". This gravely affected the primary education system as the examination results were made the basis of providing grant by the government. In the secondary school education, commission recommended two types of courses where course A was to be pursued for giving the entrance examination to take

admission in the universities and course B was meant to be taken for vocational stream.

George Curzon as the Viceroy of colonial Bharat convened a conference in Shimla in 1901 where 150 resolutions were adopted, touching every field of education though the proceedings of the conference were never made public probably because no native was called for the same. The conclusion in the conference was that higher education was pursued only for the purpose for entering government jobs, there was dominance of examination over teaching, emphasis was laid on memory training, vernaculars were neglected.

The Calcutta University Commission set up in the year 1917 under Vice-Chancellor of Leeds University, Dr. Micheal Sadler recommended that for the conduct of examinations, appointment of teachers and curriculum construction, an academic council with faculties of different subjects and Board of studies should be formed. The University Commission constituted immediately post-independence in 1948 was headed by Dr. SarvpalliRadhkrishnan recommended ways for examination evaluation. The report said that if we are to suggest one single reform in University Education, it should be that of examinations. It recommended that the grace marks should be done away with and essay type questions should be supplemented with objective questions in the examinations. The commission also recommended that the standards for success at the examination should, as far as possible, be uniform across the universities and proposed the following -70% or more for first class, 55% to 69% for second class and at least 40% for third class.

Indian Education Commission was constituted under Chairmanship of William Hunter in the year 1882 and in its recommendations, the commission recommended that grants-in-aid for the indigenous schools should be on the basis of "Payments by Results". This gravely affected the primary education system as the examination results were made the basis of providing grant by the government.

The Mudaliar Commission setup in 1952 looked into the status of the Secondary education and recommended objective type tests and internal assessment. It also suggested that the certificate of the student should exhibit his performance but no remark with reference to his/her status of being pass or fail. The Education Policy, 1986 recommended that the assessment of the performance of a student is an integral part of process of learning and teaching. The National Education Policy 2020 has made recommendations for assessment of the students so as to achieve optimizing learning and development of all students. The evaluation and assessment will be a key component in the successful implementation of the present policy and future of our education system. ❑

Education and Evaluation

Dr. T.S. Girishkumar

Professor of Philosophy (Rtd.)
MSU Baroda
(Gujarat)

Education, when happens formally, evaluation of both teaching and learning becomes imperative. This is natural with any structured situation, where some kind of transparent objectivity is usually called for. How a kind of education had made difference to an individual is the main criterion to look for appropriate personal for any kind of engagement, and that is how things happen. In a modern corporate world, the employers hardly have sufficient time to look for right candidates, so they depend on some techniques of designs to select candidates for their requirements.

For all these, educators must assess their trainees and provide certificates. Such certificates are the indicators to the abilities and qualities of educated people and to that extent, examinations are conducted and certificates issued.

Evaluation of evaluations

All told, evaluation becomes critically crucial for any purpose. It always suggests the potentiality of the person concerned. Now the question shall be, how realistic such evaluations can be? Are they really good enough?

Indeed, no evaluation can be totally realistic. Let us just ponder, actually, what do we 'evaluate'? Normal evaluations are only memory tests. When a person has good memory, it really does not imply that he is intelligent, or still far, analytic. Examinations test only memories, not intelligence in the real sense of the term. The Quotients themselves fall into four categories as per the modern studies, and they are, IQ (Intelligence Quotient), EQ (Emotional Quotient), AQ (Adversary Quotient) and I shall add another, SQ (Spiritual Quotient). A near perfect person shall have all these quotients in sufficient and adequate proportion, everything to the right requirement. Now, seriously, which common examinations can evaluate these?

There is yet another difficulty. Mental ability can be put into two categories, analytic ability and common – synthetic ability. In our experience, people with analytic mind are indeed, very less in number, the majority 'successful' people are synthetic minds. On the other hand, people with analytic abilities need not also be successful in lives like others.

Thus, in spite of our beliefs in evaluations and examinations, we remain unsure of their efficacies, performances and we really find them not much dependable. Further, we also really do not have any solutions to this.

Conventional examinations

Conventional examinations in universities gives results in terms of marks normally out of 100. On a routine, the marks do give us good indicators as to how a candidate shall be. It is rather easy to judge a student on the basis of marks awarded, though there are obvious difficulties.Different institutions may have different levels of awarding marks, some may be liberal and some may be strict. Nonetheless, we have no options other than going by the marks with all its difficulties and complications.

To sum up, education provided need to be evaluated undoubtedly, the evaluation has to be objective enough for anyone to make sense of it, though there are serious inherent difficulties with normal evaluations as mentioned earlier. We can work towards improving upon evaluation methods, and we have to remain flexible. At the same time, instead of improvising evaluation methods we keep copying others by going with grading system and create much obscurities. This has to be seriously addressed and corrected where necessary and where possible.

Some institutions conduct some kinds of tests like entrance tests for admissions. This shall roughly give some kind of uniformity to select candidates for further tests like personal interviews. Thus, conventional examination pattern and marks system can function as the first stage of evaluation of a candidate. Of course, all these donot remain already perfect.

Marks vs grading system

In contemporary times we come across grading system replacing marking system. This seems to have caught attention of many as the 'in thing' new in academics. Some institutions provide a conversion table of converting grade to marks, but that too shall only be wide spectrum.

Now let us think about why at all these grading systems had got on our minds? Commonly people say that European universities and other universities in the world are giving grades these days, so we

also should also be updated with them. But there is another story behind this.

The old English proverb say ‘all that glitters are not gold’, and similarly, many European phenomena are not as simple as they appear to be; there are inside stories to them, sometimes nefarious as well. Many, perhaps most of the universities in the west are corporates – in the sense that funded largely from the fees collected. The more numbers of students, the more shall be the fees, naturally. Over a period of time, they have devised various program to attract maximum numbers of students, and they are ever improvising and improving upon it. They used to put up advertisements even for students to select optional papers, each to get maximum. For instance, some one wants to teach ‘Philosophy of Mind’ as optional paper, the advertisement for that paper could be rhetorically ‘GnotiSeution – Know Thyself – Know Your Mind through such and such paper’ and so on. There occurs kind of desperation in attracting maximum students by everyone. In short, there occurs a kind of corporate competition.

Since the ‘clientele’ becomes most important, there arises the obligation to satisfy the clients from the universities. Here, when a student pays the fees asked for, they cant afford to be very strict with the marking or awarding degrees, but at the same time, a standard also has to be maintained. In all likelihood, the idea of grading arises from this predicament. Strictly speaking, grading is a kind of eyewash. Just look at the grading system, they give one grade to a wide band of marks – for instance, from 40 to 55 grade C, from 65 to 70 C+ 70 to 80 B, 80 to 85 A and the like. Different universities grade differently with their marks ‘band’, for which they sometimes provide a conversion table.

This shall be very confusing. A person who got 40 marks is also C and a person who got 55 marks is also C. does it imply that they both are alike? This is what makes the grading system an eyewash. On the part of students who pay the fees, they shall be comfortable: they pay the stipulated fees and are sure of getting a decent grade, which even if they just graze through, is not reflecting in their grades.

Bharatiya situation

In our nation, most universities are public funded and there is no dearth of students. Most universities do not depend on fees collected from students. Then, why should we imitate others? When an argument is put forward that our students going outside can have difficulties, we can easily provide a conversion table as to from this much marks to this much it is such and such grade and so on. It appears that we are blindly copying others without good thoughts.

To sum up, education provided need to be evaluated undoubtedly, the evaluation has to be objective enough for anyone to make sense of it, though there are serious inherent difficulties with normal evaluations as mentioned earlier. We can work towards improving upon evaluation methods, and we have to remain flexible. At the same time, instead of improvising evaluation methods we keep copying others by going with grading system and create much obscurities. This has to be seriously addressed and corrected where necessary and where possible. ❑

Assessment in School Education as per NEP – 20

D. Ramakrishna Rao

All India President,
Vidya Bharathi

NEP-20, envisages a big shift in the way we educate, as quality of learning is the core issue. It emphasizes more on building competencies and 21st century skills. Hence transforming assessment strategies for student development becomes very much essential. Naturally the culture of schooling system will shift from summative and primarily testing on rote memorisation skills to more regular and formative. This also promotes learning and development of students by evaluating higher order skills such as analysis, critical thinking and conceptual clarity etc.

NEP – Pedagogy and Assessment

The NEP-20 very much indicated pedagogical changes and strategies to provide quality education which is not only life changing but also mind crafting with character building experiences. Pedagogical modifications include joyful, engaging, experiential, experimental, interactive, activity based holistic, inclusive, collaborative, creative, communicative and discussion oriented learning programmes along with learner centric processes, inter and multi-disciplinary approaches and with the focussed base being competency, knowledge, logical and scientific thinking. Strategy shift is towards seminars, quizzes, conferences, field-trips, debates, group-tasking, interviews, dramatization, mind mapping, pictorial stories, graphic reading, image harvesting, reading and reflection etc. Keeping all this in view class room activity and assessment transformation is absolutely essential to optimise the learning feedback. Class room thrust shall be on formative learning, which is an assessment in continuity.

School based assessment (SBA)

Taking clue from the need based changing pedagogy, we have to transform evaluation process as per NEP-20 to school based evaluation, which is a judicious and the best solution to ease integration of teaching-learning process. SBA facilitates attainment of specified competencies in terms of learning outcomes in a holistic manner through classroom transaction. Assessment is done by school teachers and other members of the system.

Benefits of SBA

Let us try to list out some of the benefits and of course classroom practitioners can add few more based on their experience.

1. Personalised instruction takes place for alround development of a student.
2. Definitely it improves Teacher-Student relationship, for pushing more man-making initiatives.
3. Student engages in metacognition leading to intentional thinking and learning about himself, for getting a better connect.
4. As we already noted the focus is more on competencies rather than content.
5. Reposes faith on the teacher and the system.
6. Develops positive attitude on learning and assessment.
7. Focus is on assessment of and as learning encourages individual, peer, teachers and parents-assessment.
8. Documentation is reduced to some extent as assessment goes on with learning process in and outside the classroom.

Teacher is the frontline warrior and fulcrum to bring theory, policies and expectations to practice level to the class room. Hence, he should be qualitatively trained with different strategies and practices of school based assessment. It should be in-depth, intense and exhaustive practical training to equip the educator with proper mindset and tools. Entry and exit assessment of training to assure required professional standards is also essential with periodical updation and upskilling under experienced mentors.

Salient features of SBA

All the expectations from NEP-20 are met with this type of assessment as we observe some of the salient features, as mentioned below.

1. It integrates learning, teaching and assessment, for better outcomes.
2. This promotes child-centred and activity-based pedagogy and strategies.
3. Learning outcome based competency development with a minimal importance to content memorization is involved.
4. Stress free, non-threatening, active and joyful participation can be found, which is not found in achievement tests and evaluation process.
5. Promotes self confidence of students.

Assessment strategies and practices

These are methods used by educators to evaluate students progress to plan the content and decide next course of action for improvement by adjusting curriculum schedule.

We can not list out all strategies as they are more situational,

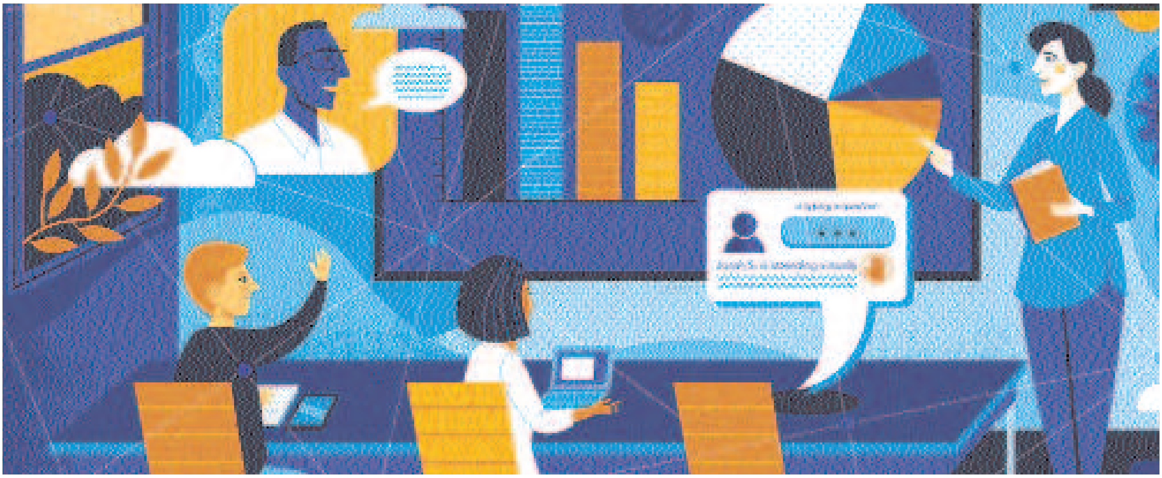

contextual and based on the nature of the student. To name few viz. observation, interview, portfolio, feedback, simulation, checklist, self assessment, project-work, rating-list, peer-assessment, pair-sharing, group-work, assignment, experimentation, focus-group-discussion, role play, anecdotal record, reflective writing, choral response, computer based survey and one minute response etc. We can add few more with our experience and wisdom.

Teacher should be patient enough to use diverse assessment strategies and practices since each individual is differently efficient and abled. Application of mixed strategies would ensure exact and judicious representation of their competencies and ability.

Teachers training and empowerment

Teacher is the frontline warrior and fulcrum to bring theory, policies and expectations to practice level to the class room. Hence, he should be qualitatively trained with different strategies and practices of school based assessment. It should be in-depth, intense and exhaustive practical training to equip the educator with proper mind-set and tools. Entry and exit assessment of training to assure required professional standards is also essential with periodical updation and upskilling under experienced mentors.

Ensuring impact of assessment on learning

As there is a paradigm shift towards student centric outcome-based approaches, assessment strategies and practices would definitely impact students learning levels. We also know that assessment is at the heart of the students experience and it defines the actual curriculum, as we can translate assessment record into applicable suggestions for practice to ensure quality in education.

Going for Holistic progress card

Ultimately we should go for Holistic progress card to assess Alround development (Sarvangeena Vikasa) and Holistic development (Samagra Vikasa) of a student. It is a wider and larger plan with a detailed output progress card. 360 degree multidimensional assessment mentioning every aspect of his personality, which can include self and peer evaluation as well without ignoring artistic, social, emotional, spiritual and cultural vision. Ofcourse it is needless to profess that it should be continuous and comprehensive assessment.

In conclusion, our duty is to build NEP-Eligible school, NEP-Competent principal, NEP-Skilled teacher, NEP-Supportive parents, NEP-Active alumnus, NEP-Encouraging Management, NEP-Responsible poorvaacharya along with following school based assessment. Ultimately our empowerment of teacher should transform him to be the ‘Knowledge-Guide’ from his present role of ‘Knowledge-Bearer’.❑

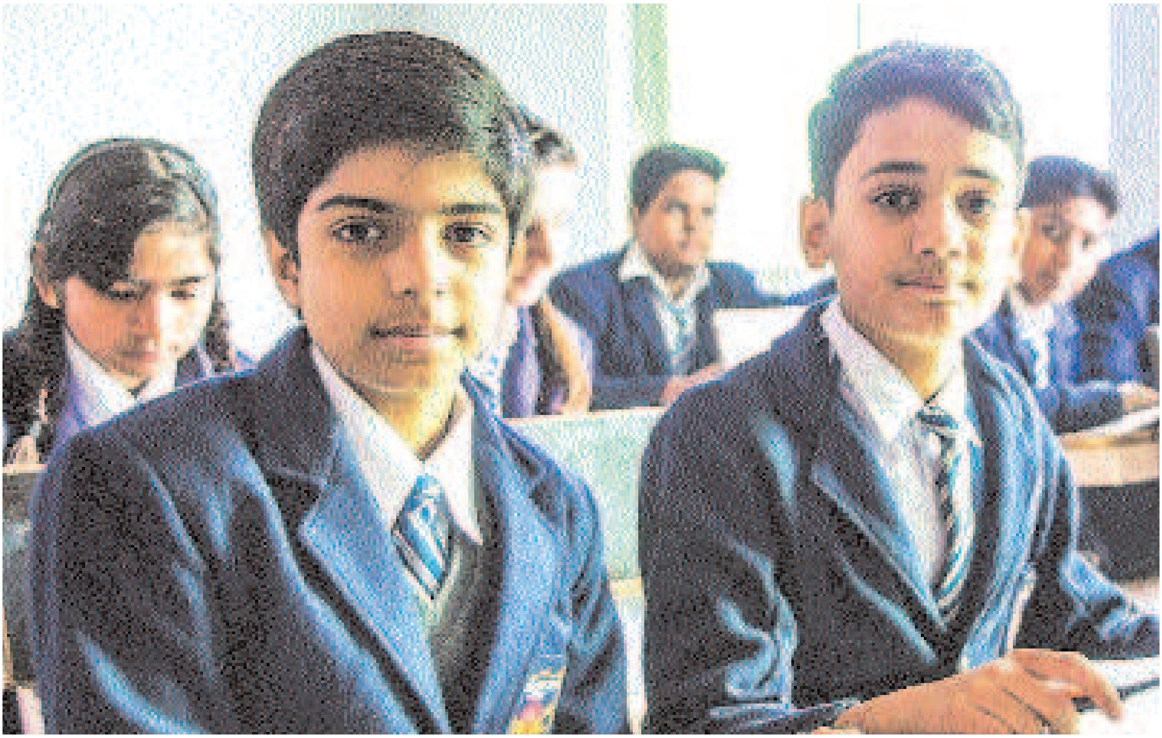

Assessment and Evaluation System in Context of NEP-2020

Dr. Shamshir Singh Dhillon

Assistant Professor, Department of Education, Central University of Punjab, Bathinda

Education of an individual is not just about academic curriculum but also about putting theory into practice, inculcating ethics and the significance of serving a public purpose in their professional careers.It is essential that critical and multidisciplinary analysis, communication, argument, knowledge, and creative problem-solving is at the core of this endeavour. In order to achieve this objective, professional education should not be confined to the confines of a single area of expertise. Professional education and the need to revitalize and promote professional courses in the agricultural, legal, medical, and technological domains are discussed in the National Education Policy (NEP) 2020 (MHRD, 2020; Yenugu, 2022). Professional training is an important part of the curriculum for higher education. Institutions in agriculture, law, health sciences, technical education, and other fields should all try to become multi-functional (UGC, 2020). The following areas of professional education are included in the preview of the NEP 2020:

NEP-2020 has changed the way education works in the healthcare field in a meaningful way. The NEP has done an excellent job designing the new course duration, structure, and design of academic programs, which will now be of significant value to learners (Gupta, 2020). Today, students will be evaluated more consistently and regularly based on well-defined criteria that are largely necessary for employment in primary care and secondary hospitals. Because individuals engage in

pluralistic choices concerning healthcare our national healthcare. Education system must become more integrated. This means all homeopathic, medical education students must be familiar with Ayurveda, Yoga, Naturopathy, Unani, Siddha, and Homeopathy (AYUSH) and its associated practices(MHRD, 2020; Pradeep, 2021). One must have a fundamental understanding of the antithesis. In addition, there will be an increased focus on preventative medical care and community medicine in every type of medical education.

It is planned to bring back agricultural education along with related academic subjects. While agricultural universities make up around 9% of all institutions in the country, less than 1% of all students enrolled in higher education are studying agriculture and related subjects (Chandrakanth, 2022). In order to increase agricultural productivity, it is necessary to improve the capacity as well as the quality of agriculture and the disciplines that are closely related to it. This can be accomplished by increasing the number of graduates and professionals with better skills, conducting research activities, and conducting market-based renewal linked to technology and methods. A significant increase will be made in the number of programs integrated with general education to facilitate the formation of professionals in the agricultural and veterinary sciences. Education programs will focus on creating

professionals who can comprehend and use local contacts, ancient traditions, and innovative technologies while also being aware of crucial issues such as reduced soil productive output, global warming, and food self-reliance for our rising population(Pradeep, 2021). This shift in the design of agricultural education will take place over the next few years. Institutions providing agricultural education are obligated to benefit the communities in which they are located directly; one strategy could be establishing agricultural technology parks to encourage the life cycle and propagation of new technology and promote sustainable agricultural practices.

The NEP also encourages a move away from traditional teaching methods that emphasize learning facts and towards a more well-rounded approach to education. In addition to the subject of study, it develops an innovative and diverse curriculum that places equal emphasis on various other topics, such as the humanities, sports, fitness, languages, culture, and the arts, among others. So, it seems likely that the National Education Policy will help change India's education system so that it can better meet the country's needs in the years to come.

The National Education Policy 2020 (NEP 2020) has also emphasized making Indian legal education competitive internationally. The primary objective of the NEP, which is part of the legal education system in India, is to incorporate existing best practices and emerging technology to improve access to justice and shorten the time it takes to provide it(Bose, 2021). The NEP curriculum for legal studies represents the social and economic settings, the history of legal thought, concepts of equity, the practice of adjudication, and other relevant

topics in an evidence-based approach. The provision of legal education by state institutions should involve offering a bilingual education to aspiring attorneys and judges, with instruction in both English and the dialect of the state where the institution is located.

When we talk about technical education, we are referring to the degree and diploma programs that are offered in subjects like engineering, future technologies, management, architectural style, city planning, pharmaceutics, hospitality management, catering technology, and other areas that are essential for the growth and development of India as a whole (NEP 2020). To keep innovation and research going in these fields, there will not only be a big need for skilled workers but the business world and higher education institutions will also need to work closely together. There will likely be less of a gap between technical education and other fields due to technology's influence on human endeavours. Also, there will be a renewed focus on ways to engage with other fields of study, and technical education will be given in facilities and programs that bring together people from different fields of study. Professionals in cutting-edge fields such as artificial intelligence (AI), 3-D machining, big data analysis, machine learning, genetic research, microbiology, nanomaterial, neurology, healthcare, the environment, and green buildings will also be trained. It will boost youth employment in graduate education.

NEP 2020 tries to meet the need to educate the next generation of experts in many fields, from agriculture to artificial intelligence. India must get itself prepared for what lies ahead. Moreover, NEP 2020 opens the path for many young students with big dreams to get the training they need to achieve their goals. Implementing it effective manner will be essential to ensuring its success. The NEP also encourages a move away from traditional teaching methods that emphasize learning facts and towards a more well-rounded approach to education. In addition to the subject of study, it develops an innovative and diverse curriculum that places equal emphasis on various other topics, such as the humanities, sports, fitness, languages, culture, and the arts, among others. So, it seems likely that the National Education Policy will help change India's education system so that it can better meet the country's needs in the years to come.❑

Importance of Examination in the Education System

Prof. Suneel Kumar
Department of Commerce
Shaheed Bhagat Singh
College, University of
Delhi (India)

न चोरहार्यम् न च राजहार्यम्
न भ्रातृभाज्यं न च भारकारि।
व्यये कृते वर्धत एव नित्यं
विद्याधनं सर्वधनप्रधानम् ।।

It means education can neither be plundered by a thief nor can be squeezed by the king, cannot be divided by brothers, and does not fall on consumption. The more education is spent, the more it grows.

"Education" is the tool that shapes the character of an individual and a nation, and it has the potential to transform the world.Although education might have bitter roots, its fruits are always sweeter.As a tree is nothing without its roots, in the same vein, education is nothing without exams (Al Amin & Greenwood, 2018). But interestingly,when students hear the word "exam,"many of them become anxious or afraid. It is just like the examination is the biggest enemy of the student and parents also (Jackson, 2010). It may happen because they have developed a poor mindset about examination. Moreover, maybe they considered examination as the ultimate test of their intelligence.

So, an important question has been raised"Does examination actually matter" Of course, Yes, tests are the most important aspect of any education system. The idea behind examinations is not to depress students. Exams are designed to instil in pupils a sense of accountability for learning the content and effectively presenting it. In general, students take written and oral examinations in their schools and institutions. They wrongfullybelieve that examinations are not required, but if they strive to think positively, they will be able to see the many advantages of taking exams (Lazar, 2015). Examining pupils' understanding of a topic or subject through examination is a general progression for them. Exams help students to develop a more positive outlook on lifeand improve their memory and study techniques.Exams are used to assess students' knowledge and proficiency in a given subject or area of study and provide students feedback on their academic progress by assessing their subject-matter understanding. A few points have been discussed, which highlight the importance of examination in the education system.

Measurement of academic Performance:Exams are used to evaluate students' academic progress and gauge their degree of topic mastery. They offer a consistent way to assess a student's knowledge and abilities.

Evaluation of teaching effectiveness

Exams are useful for assessinghow well the teaching and learning process is working. They provide feedback to teachers and institutions on how well

their teaching strategies are working and how they can improve their methods.

Preparation for future academic and professional pursuits: Exams help to prepare students for future academic and professional pursuits by developing their critical thinking skills, analytical skills, and problem-solving abilities.

Fairness and Objectivity

Exams provide a fair and objective means of evaluating students. They are designed to ensure that all students are assessed based on the same criteria, regardless of their background, ethnicity, or gender.

Examination plays a significant part in the educational system as a whole and in the process of learning. Exams and tests are excellent tools for evaluating the knowledge that pupils have in a certain topic. From exams, strong and weak areas of the student can be identified, which helps to understand where students need help and also to get an understanding in which areas the interest of students has been developed (Leeming, 2002). If more attention is paid to the strong areas, then students can do wonders in their life. Swami Vivekanand also stated that "We want that education by which character is formed, the strength of mind is increased, the intellect is expanded, and by which one can stand on one's own feet." Therefore if the basic concepts of a student are strong, then his/her subject knowledge and critical, creative thinking arealso strong. An examination helps to identify those loose areas of students where work is needed to be done. The examination helps students to grow as individuals by imparting values, fostering exceptional thinking, self-assessment, and confidence to overcome failures, and instilling optimism in them to raise the bar for educational excellence. Not only does student examination also assist all teachers in determining the students' mental aptitude and identifying their weaknesses. In turn, this encourages kids to act and think appropriately. Additionally, it provides a platform to students for developing a better personality by "enhancing mathematical thinking, communication, logistics, science, and expressive character of the topic." This will allow for the addition of "ability," subtraction of "failure," and multiplication of "success."

Indeed, in terms of the evaluation pattern under NEP-2020, multiple provisions have been made to make board exams easier, which primarily test "core capacities, competencies rather than months of coaching or memorization." Also, NEP-2020 seeks to redesign the report card, and it includes evaluations from teachers, peers, and the student themselves. These steps will help to reduce the fear of examination from the minds of young students, and the examination will become a part of their regular learning process.

Honorable Prime Minister of India,Shri Narendra Modi, has also taken the initiative and started the "Pariksha Pe Charcha" series in the year 2018. Where every year before the final examination, he interacted with students and their parents and tried to motivate them that they should take the examination in a positive manner. He also shares tips with students on how to deal with unnecessary examination stress. Along with that, in his radio program,' Mann Ki Baat, ' he also encouraged students to appear in the exams confidently and rely on hard work, not on unfair means. He also suggested that students take the examination results in a positive manner and not get disheartened if they score lesser marks; there is always a next time. He wrote the book "Exam Warriors" for students to help them get over the anxiety of facing an examination. According to him, students should behave like exam warriors, not as exam worriers.

In the year 2020, the Union government approved the National Education Policy. This initiative has been hailed as a revolution in the Indian educa-

tion system. Keeping in mind the importance of the evaluation system, policymakers paid considerable attention to the examination system. A number of changes have been introduced in the examination system at the school and college levels. Policymakers made an attempt to design an evaluation system which is encouragingthe "holistic development" of the student. The goal of the National Education Policy is to make board examinations "easier" and to test the student's "core capacities." State and Central Boards of education have been recommended to develop different models of exams, such as-annual/ semester/ modular. Also, exams will be taken at two levels, objective and subjective, which means each subject offered in the board exam will have an objective as well as a description exam.The Board exams could also become modular, i.e., they can be conducted more than once in a year, i.e., one main examination and one for improvement, if desired. The policy also makes clear that evaluations of students taking the Board examinations would be done in schools using a "multidimensional report." Apart from the assessment provided by the teachers, the progress card will include self-assessment as well as peer assessment.

Apart from the examination system, under NEP-2020, favourable changes have been made in the syllabus pattern and the adoption of subjects for the students of schools and universities. With the amalgamation of subjects and the crossover between streams, students will now be able to study subjects as per their preferences and pursue higher studies accordingly. Along with the traditional disciplines, they will have the option of selecting subjects like arts and crafts and vocational training. For instance, a science student will be able to select an art subject and study both at once. According to the policy, there will not be a clear distinction between "curricular," "extracurricular," or "co-curricular," or between "vocational" and "academic" streams. This implies that extracurricular activities like drawing, painting, etc., may be included in the student's progress reports. NEP 2020 has given students, especially those in schools, the freedom and choice to choose subjects by using competency-based learning.

Also, earlier, it was observed that students were frightened a lot by their entrance examinations. Therefore, the National Testing Agency, or NTA, would provide "high-quality aptitude tests" twice a year to help kids in their university entrance examinations. The National Education Policy will make way for learning with critical thinking along with "discovery-based, discussion-based, and analysis-based learning." Also, provision has been made for "bagless days" and visits to local craftsmen. Also, it has been mentioned that there will be possible addition of vocational training to students from their school level. The progress cards for every student will be modified in accordance with the proposed National Educational Policy 2020 for school-based evaluation. Report cards will be created. "a holistic, 360^0, multidimensional report that reflects in great detail the progress and the uniqueness of each learner in the cognitive, affective, and psychomotor domains". Under the NEP 2020, a "National Assessment Centre 'PARAKH' -Performance Assessment, Review, and Analysis of Knowledge" for Holistic Development) will be set up. The committee will be in charge of recommending standards for student evaluation and assessment to all recognized school boards, including state boards, which the Centre has not yet had any influence over.

Indeed, in terms of the evaluation pattern under NEP-2020, multiple provisions have been made to make board exams easier, which primarily test "core capacities, competencies rather than months of coaching or memorization." Also, NEP-2020 seeks to redesign the report card, and it includes evaluations from teachers, peers, and the student themselves. These steps will help to reduce the fear of examination from the minds of young students, and the examination will become a part of their regular learning process. ❑

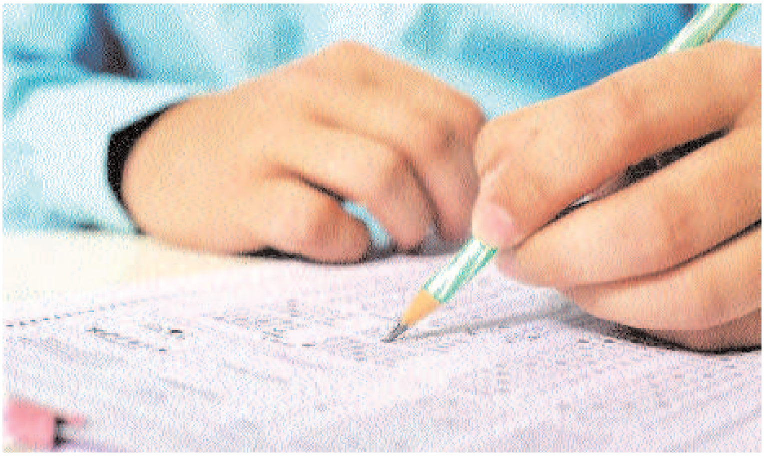

Assessment and Examination in India

From Vedic Period to Present

Darshan Kumar
Teacher
Poonch (JKUT)

Assessment and examination have been a part of the Indian education system for centuries. Since the Vedic period, the assessment system in India has evolved significantly, with changes in the education system and the emergence of new knowledge systems. The assessment system in India has undergone several reforms, with each period bringing its unique features and challenges. This article aims to provide an overview of the evolution of the assessment system in India from the Vedic period to the present, highlighting the major reforms and the opinions of renowned educationists.

The Vedic period marks the beginning of the Indian education system. The Gurukul system was prevalent, where students would stay with their teachers to learn and practice various skills, including reading, writing, and critical thinking. Assessment was an integral part of the Gurukul system, where the teacher would assess students' learning through oral examinations, recitation, and performance. The focus was on the overall development of students, including character-building and physical fitness.

The medieval period saw the emergence of various educational institutions, including madrasas, where Islamic theology and language were taught. Assessment was again an essential part of the educational system, where students were assessed through oral examinations and written assignments. The focus was on acquiring knowledge and applying it in practical situations.

During the British era, the assessment system underwent significant changes. The British introduced a standardized education system that was based on the European model, with a focus on producing clerks and administrators for the colonial government. The assessment system was based on written examinations, where students were tested on their ability to memorize and reproduce information. The emphasis was on rote learning, and the assessment system was criticized for being rigid and inflexible.

Post-independence, India witnessed a massive transformation in the education system, and the assessment system was no exception. The emphasis was on making the assessment system more inclusive, student-centric, and holistic. The focus shifted from rote learning to conceptual understanding, critical thinking, and problem-solving abilities.

Several educationists have shared their views on the assessment system in India. Dr.Sarvepalli Radhakrishnan, an Indian philosopher, statesman and second president of India, believed that "assessment should not be the sole criterion for evaluating students' learning outcomes. The assessment system should focus on developing the overall personality of students, including moral and ethical values." He emphasized the importance of continuous and comprehensive evaluation, where students are assessed through various methods,

including oral examinations, assignments, and project work.

Indian aerospace scientist and 11th president of India, Dr. A.P.J. Abdul Kalam, argued that "the assessment system should evaluate students' creativity, innovation, and problem-solving abilities, apart from their subject knowledge." He believed that the assessment system should encourage students to think independently and develop a passion for learning.

Several states in India have taken initiatives to bring about changes in their assessment system. In 2009, the state of Kerala introduced a grading system to replace the traditional marks-based evaluation system. The grading system aimed to reduce the stress and pressure on students and create a more inclusive assessment system. The state of Tamil Nadu introduced a new assessment system in 2019, which focuses on assessing students' problem-solving, analytical, and critical thinking abilities.

The assessment system in examinations in India has undergone significant reforms over the years, with various education policies and commissions being set up by the government to bring about changes in the system. These reforms have been aimed at making the assessment process more inclusive, fair, and relevant to the needs of students. In this article, we will also discuss the reforms in the assessment system in different education policies and commissions set up by the government of India from time to time, along with the recommendations of important educationists regarding assessment in examinations in India.

Education Policies and Reforms

The government of India has set up various education policies and commissions over the years to bring about changes in the assessment system in examinations in India. Some of these policies and reforms are:

National Policy on Education (1968)

The National Policy on Education (NPE) was formulated in 1968, which aimed to promote a uniform system of education across the country. The policy recommended the introduction of a continuous and comprehensive evaluation system in schools, which would assess students' performance in a holistic manner. It also stressed the need for reducing the emphasis on external examinations and encouraged the use of internal assessments to evaluate students' progress.

New Education Policy (1986)

The New Education Policy (NEP) was introduced in 1986, which aimed to promote excellence in education and make it more relevant to the needs of society. The policy recommended a shift from rote learning to conceptual understanding and problem-solving abilities. It stressed the need for a continuous and comprehensive evaluation system that assessed students' overall development, including cognitive, affective, and psychomotor abilities.

Rashtriya Madhyamik Shiksha Abhiyan (2009)

The Rashtriya Madhyamik Shiksha Abhiyan (RMSA) was launched in 2009, which aimed to improve the quality of secondary education in India. The program recommended a shift from a marks-based assessment system to a grading system, which would provide a more accurate assessment of students'

abilities. It also recommended the use of formative assessments to evaluate students' progress throughout the academic year.

National Education Policy (2020)

The National Education Policy (NEP) 2020, which was approved by the cabinet in July 2020, is the latest education policy introduced by the government of India. The policy recommends a shift from a content-based curriculum to a competency-based curriculum, which focuses on developing students' skills, knowledge, and values. It stresses the need for a flexible and inclusive assessment system that assesses students' overall development and encourages critical thinking and problem-solving abilities.

Recommendations of Educationists

Various educationists and prominent personalities like K. Kasturirangan, John Dewey, Paulo Freire, Howard Gardner, Benjamin Bloomhave shared their views on the assessment system in examinations in India and made recommendations to improve the system. Some of these recommendations are:

K. Kasturirangan, who served as the chairman of the committee that drafted the National Education Policy (NEP) 2020, has made several statements on assessment in examinations in the new policy. One such statement by him is as follows:

"In the new NEP 2020, the emphasis is on holistic, formative, and competency-based assessments. The policy aims to move away from rote learning and encourage critical thinking and problem-solving skills.

In conclusion, the assessment system in examinations in India has undergone significant reforms over the years, with various education policies and commissions being set up by the government to bring about changes in the system. The recommendations of educationists have also played a crucial role in shaping the assessment system in India. However, there is still a need for further reforms to make the assessment system more inclusive, fair, and relevant to the needs of students.

John Dewey

John Dewey, an American philosopher, and educationist, believed that assessment should be used to encourage students to think independently and creatively. He stressed the need for a continuous and comprehensive evaluation system that assessed students' overall development, including cognitive, affective, and psychomotor abilities.

Paulo Freire

Paulo Freire, a Brazilian educator, emphasized the need for a participatory and inclusive assessment system that encouraged students to reflect on their learning experiences. He believed that assessment should be used as a tool for critical reflection and dialogue, rather than as a means of ranking and sorting students.

Howard Gardner

Howard Gardner, an American psychologist, developed the theory of multiple intelligences, which stresses the need for a diverse and inclusive assessment system that recognizes students' unique abilities and talents. He recommended the use of performance-based assessments that assess students' abilities in different domains, such as linguistic, logical-mathematical, spatial, musical, bodily-kinesthetic, interpersonal, and intrapersonal.

Benjamin Bloom

Benjamin Bloom, an American educational psychologist, developed the Bloom's Taxonomy, which is a hierarchical framework for categorizing educational goals and objectives. He stressed the need for a varied and inclusive assessment system that assessed students' abilities at different levels of the taxonomy, including knowledge, comprehension, application, analysis, synthesis, and evaluation.

Conclusion

In conclusion, the assessment system in examinations in India has undergone significant reforms over the years, with various education policies and commissions being set up by the government to bring about changes in the system. The recommendations of educationists have also played a crucial role in shaping the assessment system in India. However, there is still a need for further reforms to make the assessment system more inclusive, fair, and relevant to the needs of students. ❑

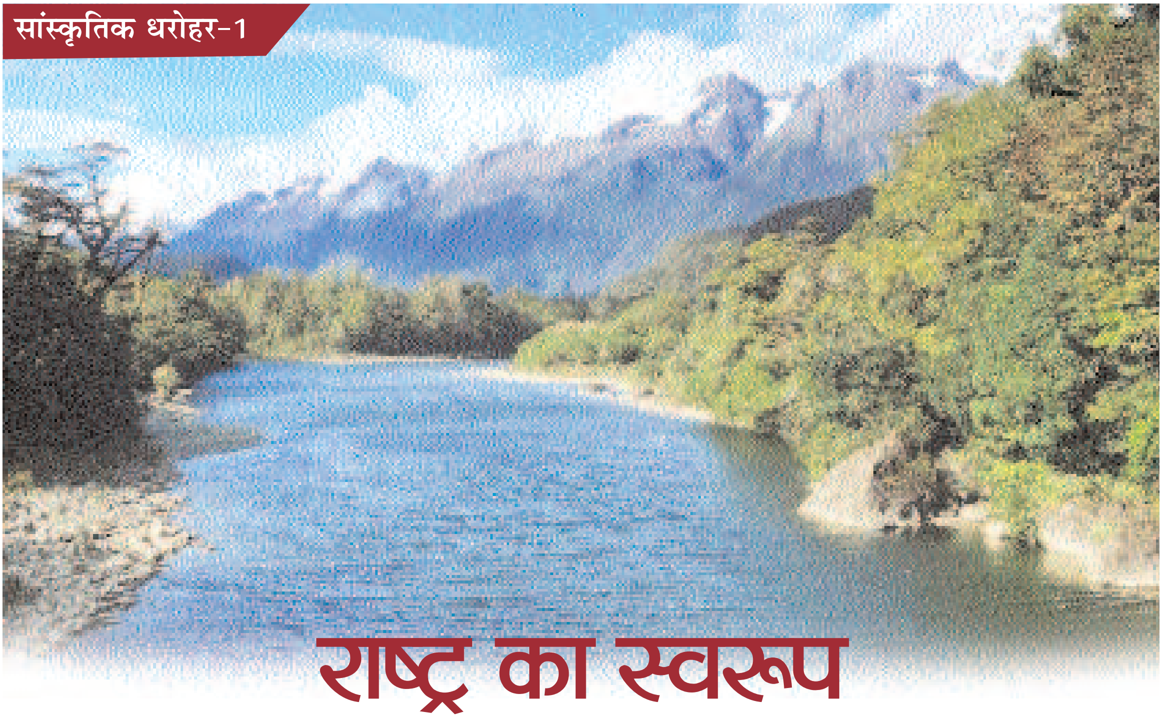

राष्ट्र का स्वरूप

डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल

काशी विश्वविद्यालय के पूर्व प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, दिल्ली राष्ट्रीय संग्रहालय

भूमि का निर्माण देवों ने किया है, वह अनंत काल से है। उसके भौतिक रूप-सौन्दर्य और समृद्धि के प्रति सचेत होना हमारा आवश्यक कर्तव्य है। भूमि के पार्थिव स्वरूप के प्रति हम जितने जागृत होंगे, उतनी ही हमारी राष्ट्रीयता बलवती हो सकेगी। यह पृथ्वी सच्चे अर्थों में समस्त राष्ट्रीय विचारधारा की जननी है। राष्ट्रीयता की जड़ें पृथ्वी में जितनी गहरी होंगी उतना ही राष्ट्रीय भावों का अंकुर पल्लवित होगा। इसलिए पृथ्वी के भौतिक स्वरूप की आद्योपांत जानकारी प्राप्त करना, उसकी सुंदरता, उपयोगिता और महिमा को पहचानना आवश्यक धर्म है।

इस कर्तव्य की पूर्ति सैकड़ों-हजारों प्रकार से होनी चाहिए। पृथ्वी से जिस वस्तु का संबंध है, चाहे वह छोटी हो या बड़ी, उसके कुशल प्रश्न पूछने के लिए हमें कमर कसनी चाहिए। पृथ्वी का सांगोपांग अध्ययन जागरणशील राष्ट्र के लिए बहुत ही आनंदप्रद कर्तव्य माना जाता है। गाँवों और नगरों में सैकड़ों केंद्रों से इस प्रकार के अध्ययन का सूत्रपात होना आवश्यक है।

उदाहरण के लिए, पृथ्वी की उपजाऊ शक्ति को बढ़ाने वाले मेघ, जो प्रति वर्ष समय पर आकर अपने अमृत जल से इसे सींचते हैं, हमारे अध्ययन की परिधि के अंतर्गत आने चाहिए। उन मेघ-जलों से परिवर्धित प्रत्येक तृण-लता और वनस्पति का सूक्ष्म परिचय प्राप्त करना ही हमारा कर्तव्य है। इस प्रकार जब चारों ओर हमारे ज्ञान के कपाट खुलेंगे तब सैकड़ों वर्ष से शून्य और अंधकार से भरे हुए जीवन के क्षेत्रों में नया उजाला दिखाई देगा।

धरती माता की कोख में जो अमूल्य निधियाँ भरी हैं, जिनके कारण वह वसुंधरा कहलाती है, उससे कौन परिचित न होना चाहेगा? लाखों-करोड़ों वर्षों से अनेक प्रकार की धातुओं को पृथ्वी के गर्भ में पोषण मिला है। दिन-रात बहने वाली नदियों ने पहाड़ों को पीस पीस कर अगणित प्रकार की मिट्टियों से पृथ्वी की देह को सजाया है। हमारे भावी आर्थिक अभ्युदय के लिए इन सबकी जाँच-पड़ताल अत्यंत आवश्यक है। पृथ्वी की गोद में जन्म लेने वाले खड्ड-पत्थर कुशल शिल्पियों से संवारे जाने पर अत्यंत सौन्दर्य के प्रतीक बन जाते हैं। नाना भांति के अनगढ़ नग विंध्य की नदियों के प्रवाह में सूर्य की धूप से चिलकते रहते हैं, उन चिवटों को जब चतुर कारीगर पहलदार कटाव पर लाते हैं, तब उनके प्रत्येक घाट में नई शोभा और सुंदरता फूट पड़ती है, वे अनमोल हो जाते हैं। देश के नर-नारियों के रूप-मंडन और सौन्दर्य प्रसाधन में इन छोटे पत्थरों का भी सदा से कितना भाग रहा है। अतएव हमें उनका ज्ञान होना भी आवश्यक है।

पृथ्वी और आकाश के अंतराल में जो कुछ सामग्री भरी है, पृथ्वी के चारों ओर फैले हुए गंभीर सागर में जो जल-चर एवं

रत्नों की राशियाँ हैं, उन सबके प्रति चेतना और स्वागत के नए भाव राष्ट्र में फैलने चाहिए। राष्ट्र के नवयुवकों के हृदय में उन सबके प्रति जिज्ञासा की नई किरणें जब तक नहीं फूटती, तब तक हम सोए हुए के समान हैं।

विज्ञान और उद्यम दोनों को मिलाकर राष्ट्र के भौतिक स्वरूप का नया ठाट खड़ा करना है। यह कार्य प्रसन्नता, उत्साह और अथक परिश्रम के द्वारा नित्य आगे बढ़ाना चाहिए। हमारा यह ध्येय हो कि राष्ट्र में जितने हाथ हैं, उनमें से कोई भी इस कार्य में भाग लिए बिना रीता न रहे। तभी मातृभूमि की पुष्कल समृद्धि और समग्र रूप मंडन प्राप्त किया जा सकता है।

जन

मातृभूमि पर निवास करने वाले मनुष्य राष्ट्र के दूसरे अंग हैं। पृथ्वी हो, मनुष्य न हों, तो राष्ट्र की कल्पना असंभव है। पृथ्वी और जन दोनों के सम्मिलन से ही राष्ट्र का स्वरूप संपादित है। जन के कारण ही पृथ्वी मातृभूमि की संज्ञा प्राप्त करती है। पृथ्वी माता है और जन सच्चे अर्थों में पृथ्वी के पुत्र हैं।

''माता भूमिः पुत्रोहं पृथिव्याः''
भूमि माता है, मैं उसका पुत्र हूँ।

जन के हृदय में इस सूत्र का अनुभव ही राष्ट्रीयता की कुंजी है। इसी भावना से राष्ट्र निर्माण के अंकुर उत्पन्न होते हैं।

पूर्वजों ने चरित्र और धर्म, विज्ञान, साहित्य, कला और संस्कृति के क्षेत्र में जो कुछ भी पराक्रम किया है, उस सारे विस्तार को हम गौरव के साथ धारण करते हैं और उसके तेज को अपने भावी जीवन में साक्षात देखना चाहते हैं। वही राष्ट्रवर्धन का स्वाभाविक प्रकार है, जहाँ अतीत वर्तमान के लिए भार रूप नहीं है, जहाँ भूत वर्तमान को जकड़े रखना नहीं चाहता वरन अपने वरदान से पुष्ट करके उसे आगे बढ़ाना चाहता है, उस राष्ट्र का हम स्वागत करते हैं।

यह भाव जब सशक्त रूप में जागता है, तब राष्ट्र निर्माण के स्वर वायुमंडल में भरने लगते हैं। इस भाव के द्वारा ही मनुष्य पृथ्वी के साथ अपने सच्चे संबंध को प्राप्त करते हैं। जहाँ यह भाव नहीं है, वहाँ जन और भूमि संबंध अचेतन और जड़ बना रहता है। जिस समय भी जन का हृदय भूमि के साथ माता और पुत्र के संबंध को पहचानता है, उसी क्षण आनंद और श्रद्धा से भरा हुआ उसका प्रणाम-भाव मातृभूमि के लिए इस प्रकार प्रकट होता है-

''नमो मात्रे पृथिव्यै।
नमो मात्रे पृथिव्यै।''

माता पृथ्वी को प्रणाम है। माता पृथ्वी को प्रणाम है।

यह प्रणाम भाव ही भूमि और जन का दृढ़ बंधन है। इसी दृढ़ भित्ति पर राष्ट्र का भवन तैयार किया जाता है। इसी दृढ़ चट्टान पर राष्ट्र और चिर जीवन आश्रित रहता है। इसी मर्यादा को मानकर राष्ट्र के प्रति मनुष्यों के कर्तव्य और अधिकारों का उदय होता है। जो जन पृथ्वी के साथ माता और पुत्र के संबंध को स्वीकार करता है। उसे ही पृथ्वी के वरदानों में भाग पाने का अधिकार है। माता के प्रति अनुराग और सेवा-भाव पुत्र का स्वाभाविक कर्तव्य है। यह एक निष्कारण धर्म है। स्वार्थ के लिए पुत्र का माता के प्रति प्रेम, पुत्र के अधःपतन को सूचित करता है। जो जन मातृभूमि के साथ अपना संबंध जोड़ना चाहता है, उसे अपने कर्तव्य के प्रति पहले ध्यान देना चाहिए।

माता अपने सब पुत्रों को समान भाव से चाहती है। इसी प्रकार पृथ्वी पर बसने वाले जन बराबर हैं। उनमें ऊंच और नीच का भाव नहीं है। जो मातृभूमि के हृदय के साथ जुड़ा हुआ है, वह समान अधिकार का भागी है। पृथ्वी पर निवास करने वाले जनों का विस्तार अनंत है। नगर और जनपद, पुर और गाँव, जंगल और पर्वत नाना प्रकार के जनों से भरे हुए हैं। ये जन अनेक प्रकार की भाषाएँ बोलने वाले और अनेक धर्मों के मानने वाले हैं, फिर भी वे मातृभूमि के पुत्र हैं और इस कारण उनका सौहार्द्र भाव अखंड है। सभ्यता और रहन-सहन की दृष्टि से जन एक-दूसरे से आगे पीछे हो सकते हैं, किंतु इस कारण से मातृभूमि के साथ उनका जो संबंध है। उसमें कोई भेदभाव उत्पन्न नहीं हो सकता। पृथ्वी के विशाल प्रांगण में सब जातियों के

लिए समान क्षेत्र है। समन्वय के मार्ग से भरपूर प्रगति और उन्नति करने का सबको एक जैसा अधिकार है। किसी जन को पीछे छोड़ कर राष्ट्र आगे नहीं बढ़ सकता। अतएव राष्ट्र के प्रत्येक अंग की सुधि हमें लेनी होगी। राष्ट्र के शरीर के एक भाग में यदि अंधकार और निर्बलता का निवास है, तो समग्र राष्ट्र का स्वास्थ्य उतने अंश में असमर्थ रहेगा। इस प्रकार समग्र राष्ट्र को जागरण और प्रगति की एक जैसी उदार भावना से संचालित होना चाहिए।

जन का प्रवाह अनंत होता है। सहस्त्रों वर्षों में भूमि के साथ राष्ट्रीय जन ने तादात्म्य प्राप्त किया है। जब तक सूर्य की रश्मियाँ नित्य प्रातःकाल भुवन अमृत से भर देती हैं, तब तक राष्ट्रीय जन का जीवन भी अमर है। इतिहास के अनेक उतार-चढ़ाव पार करने के बाद भी राष्ट्र निवासी जन नई उठती लहरों से आगे बढ़ने के लिए आज भी अजर अमर हैं।

जन का सततवाही जीवन नदी के प्रवाह की तरह है, जिसमें कर्म और श्रम के द्वारा उत्थान के अनेक घाटों का निर्माण करना होता है।

संस्कृति

राष्ट्र का तीसरा अंग जन की संस्कृति है। मनुष्यों ने युग-युग में जिस सभ्यता का निर्माण किया है, वही उनके जीवन का श्वास-प्रश्वास है। बिना संस्कृति के जन की कल्पना कबंध मात्र है, संस्कृति ही जन का मस्तिष्क है। संस्कृति के विकास और अभ्युदय के द्वारा ही राष्ट्र की वृद्धि संभव है। राष्ट्र के समग्र रूप में भूमि और जन के साथ-साथ जन की संस्कृति का महत्त्वपूर्ण स्थान है। यदि भूमि और जन अपनी संस्कृति से विरहित कर दिए जाएँ, तो राष्ट्र का लोप समझना चाहिए। जीवन के विटप का पुष्प संस्कृति है। संस्कृति के सौंदर्य और सौरभ में ही राष्ट्रीय जन के जीवन का सौंदर्य और यज्ञ अंतर्निहित है। ज्ञान और कर्म दोनों के पारस्परिक प्रकाश की संज्ञा संस्कृति है। भूमि पर बसने वाले जन ने ज्ञान के क्षेत्र में जो सोचा है और

कर्म के क्षेत्र में जो रचा है। दोनों के रूप में हमें राष्ट्रीय संस्कृति के दर्शन मिलते हैं। जीवन के विकास की युक्ति ही संस्कृति के रूप में प्रकट होती है। प्रत्येक जाति अपनी-अपनी विशेषताओं के साथ इस युक्ति को निश्चित करती हैं और उससे प्रेरित संस्कृति का विकास करती है। इस दृष्टि से प्रत्येक जन की अपनी-अपनी भावना के अनुसार पृथक-पृथक संस्कृतियाँ राष्ट्र में विकसित होती हैं, परंतु उन सबका मूल आधार पारस्परिक सहिष्णुता और समन्वय पर निर्भर है।

राष्ट्र का स्वरूप जंगल में जिस प्रकार अनेक लता, वृक्ष और वनस्पति अपने अदम्य भाव से उठते हुए पारस्परिक-सम्मिलन से अविरोधी स्थिति प्राप्त करते हैं, उसी प्रकार राष्ट्रीय जन अपनी संस्कृतियों के द्वारा एक-दूसरे के साथ मिलकर राष्ट्र में रहते हैं। जिस प्रकार जल के अनेक प्रवाह नदियों के रूप में मिलकर समुद्र में एकरूपता प्राप्त करते हैं, उसी प्रकार राष्ट्रीय जीवन की अनेक विधियाँ राष्ट्रीय संस्कृति में समन्वय प्राप्त करती हैं। समन्वय युक्त जीवन ही राष्ट्र का सुखदायी रूप है।

साहित्य, कला, नृत्य, गीत, आमोद-प्रमोद, अनेक रूप से राष्ट्रीय जन अपने-अपने मानसिक भावों को प्रकट करते हैं। आत्मा का जो विश्वव्यापी आनंद भाव है; वह इन विविध रूपों में साकार होता है। यद्यपि बाह्य रूप से संस्कृति के ये बाहरी लक्षण अनेक दिखाई पड़ते हैं, किंतु आंतरिक आनंद की दृष्टि से उनमें एक सूत्रता है। जो व्यक्ति सहृदय है, वह प्रत्येक संस्कृति के आनंद पक्ष को स्वीकार करता है और उससे आनंदित होता है। इस प्रकार की उदार भावना ही विविध जनों से बने हुए राष्ट्र के लिए स्वास्थ्यकर है।

गाँव और जंगलों में स्वच्छंद जन्म लेने वाले अनेक लोक-गीतों में, तारों के नीचे विकसित लोक-कथाओं में संस्कृति का अमिट भंडार भरा हुआ है, जहाँ से आनंद की भरपूर मात्रा प्राप्त हो सकती है। राष्ट्रीय संस्कृति के परिचय काल में उन सबका स्वागत करने की आवश्यकता है।

पूर्वजों ने चरित्र और धर्म, विज्ञान, साहित्य, कला और संस्कृति के क्षेत्र में जो कुछ भी पराक्रम किया है, उस सारे विस्तार को हम गौरव के साथ धारण करते हैं और उसके तेज को अपने भावी जीवन में साक्षात देखना चाहते हैं। वहीं राष्ट्रवर्धन का स्वाभाविक प्रकार है, जहाँ अतीत वर्तमान के लिए भार रूप नहीं है, जहाँ भूत वर्तमान को जकड़े रखना नहीं चाहता वरन अपने वरदान से पुष्ट करके उसे आगे बढ़ाना चाहता है, उस राष्ट्र का हम स्वागत करते हैं। ❑ (पाठ्य पुस्तक से साभार)

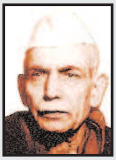

पं. माखन लाल चतुर्वेदी

एक भारतीय आत्मा के नाम से विख्यात, शिक्षक, कवि, लेखक एवं पत्रकार

एक महान क्रांतिकारी शिक्षक

पंडित माखनलाल चतुर्वेदी (1889–1968)

भारत के स्वतंत्रता आंदोलन में माखनलाल चतुर्वेदी का नाम एक ऐसे युगद्रष्टा स्वतंत्रता सेनानी शिक्षक, लेखक और पत्रकार के रूप में स्मरण किया जाता है जिन्होंने अपनी तेजस्विता, मौलिकता, प्राणवत्ता और आधुनिकता के मिश्रण से अखंड भारत के निर्माण की सतत् साधना की। 'एक भारतीय आत्मा' के नाम से विख्यात पंडित माखनलाल चतुर्वेदी ने अंग्रेजों के विरुद्ध स्वतंत्रता के समानांतर गो-संरक्षण की लड़ाई भी लड़ी। अपने पत्र 'प्रभा', 'प्रताप' तथा 'कर्मवीर' में राष्ट्र-चिंतन, किसान, ग्रामीण जीवन, ब्रिटिश राज की तानाशाही, भारतीय पर्व-उत्सवों के सांस्कृतिक महत्त्व तथा समाज और राजनीति से संबंधित अनेक निबंध और कविताओं की रचना की। उनकी 'पुष्प की अभिलाषा' और 'अमर राष्ट्र' कविता ने तो समूचे भारत में क्रांति की आह्लादकारी ज्वाला का संचार कर दिया था। इन सबके बीच माखनलाल चतुर्वेदी स्वयं एक मूर्धन्य शिक्षक थे और शैक्षणिक विषयों पर उन्होंने कुछ महत्त्वपूर्ण लेख लिखे हैं। वे बुनियादी शिक्षा के समर्थक थे। उल्लेखनीय है कि स्वतंत्रता के पश्चात लागू भारत की शिक्षा नीति और शिक्षा-व्यवस्था से वे संतुष्ट नहीं थे। यहाँ उनके इन्हीं विचारों से ओतप्रोत दो लेखों को उद्धृत किया जा रहा है; पहला- 'भारत की शिक्षा का प्रश्न' तथा दूसरा – 'भारतवर्ष की वर्तमान उच्च शिक्षा'।

भारत की शिक्षा का प्रश्न (लेख)

उन लोगों से, जिन्होंने पुस्तकें पढ़-लिखकर अपने को पढ़ा-लिखा बना लिया है, यह छिपा नहीं है कि भारत में ऐसे लोगों की संख्या जो खींच-तान कर कुछ थोड़ा-सा पढ़ लेते हैं, और साथ ही वे लोग जो भारत की वर्तमान शिक्षा पाये हुए हैं, सब मिलाकर 1000 में 59 अर्थात् प्रति सैकड़ा 5.9/10 है। हम पर विलायती गद्दी की सत्ता कितने ही दिनों से है। गदर का साल अभी भी बहुतों को भूला न होगा। उसके पहले से ही अंग्रेज लोग भारतीयों को पढ़ाने के प्रयत्न में लगे हैं। और यह जो प्रति सैकड़ा ठोक-पीटकर 6 का हिसाब बैठना है, सो उन्हीं लगभग 100 वर्षों के पूरे प्रयत्न का फल है। और हमारे 'इस पढ़े-लिखे' हो जाने के लिए हमें शिक्षादाता, गवर्नमेण्ट को धन्यवाद देना चाहिए। परन्तु इस शिक्षा पर हमें कुछ कहना है। हम पूछते हैं कि यह कैसी शिक्षा है, जो हमें दरिद्र होने से नहीं बचा सकती? यह कैसी शिक्षा है जो हमारे बच्चों की शक्ति रेखा-गणित (Geometry) और बीजगणित (Algebra) के पढ़ने में खर्च करती है। किन्तु उन्हें बनाती है, यह सब पढ़ चुकने पर 20 रु. महीने पर बिकनेवाला नकलनवीस। यह कैसी शिक्षा है जो हमारे वर्षों खराब कर देती है, किन्तु हमें जीवन-युद्ध के किसी भी काम का नहीं रहने देती। हम किसानों की सन्तान हैं, हम व्यापारियों की सन्तान हैं और हम ऋषियों की सन्तान हैं। किन्तु न हमें कृषक बनने की शिक्षा दी जाती है, न हमें व्यापारी बनने की शिक्षा दी है और न ऐसे ही कोई ऋषि हैं जो ऋषि जीवन के अनुकूल शिक्षा दें। देश के कोने-कोने से दरिद्रता की आवाज आ रही है और वह दिन-प्रतिदिन

बढ़ती ही जा रही है। व्यापार और कृषि की जो दुर्दशा हो रही है तथा कला-कौशल की जो दुर्दशा हो चुकी है, उसका वर्णन करना मानो अपने को उदासीनता की आपत्ति में डालना है। पढ़े-लिखे इने-गिने लोगों में भी पुस्तकों का रोग बेतरह बढ़ गया है। शिक्षा-लयों के वे दरवाजे भी, जो हमें पढ़े-लिखे बना दिया करते थे, अब बन्द हो रहे हैं। परीक्षाएँ बुरी ली जाती हैं। शिक्षा देने में उचित प्रणाली से कार्य नहीं लिया जाता। तिसपर शिक्षा इतनी व्ययसाध्य बना दी गयी है कि उसे पाने वाला-गरीब हो, यह कभी सम्भव नहीं। हजारों विद्यार्थी रोज ठोकरें खाते, मारे-मारे फिर रहे हैं। किसको इनकी परवाह है। शिक्षालयों के दरवाजे बन्द होने का हमें उतना खेद नहीं जितना हमें हिन्दू जाति की अकर्मण्यता से। किसान अपनी किसानी छोड़ रहा है, व्यापारी अपना व्यापार। और जो कला-कौशल के बल पर जीते हैं, उनका तो भारत से अस्तित्व ही मिट गया-सा दीखता है। संसार में रहने वाली किसी जाति का इतना बेहोश हो जाना उचित नहीं। और इसीलिए हमें इस बात की चिन्ता है। हमारे देशवासियों को शिक्षा के उचित पथ ढूँढ़ने चाहिए। पढ़े-लिखे मतिहीनों के बहकावे में नहीं आना चाहिए। जो दर्जी हो, उसे चाहिए कि वह अपने बच्चों को थोड़ा-सा पढ़ा-लिखाकर प्रारम्भिक और कुछ माध्यमिक शिक्षा देकर अच्छा और सस्ता सीनेवाला बनावे। जो धोबी का लड़का हो, वह उपयोगी और कार्यकारी कपड़े धोने वाला बने। उनकी मति मारी गयी जो पुस्तकों के ही दरवाजे अपनी समूची जाति का बलिदान कर दिया चाहते हैं। किसानों के बालकों को किसान बनना चाहिए।

अनाज पैदा करना, खाद तैयार करना, जमीन बनाना, सिंचाई करना, रोगों से फसल को बचाना, पशु पालना, दूध-घी का प्रबन्ध करना आदि सैकड़ों ही कार्य एक बुद्धिमान कृषक के करने के हैं, परन्तु ये सारे कार्य आज गरीब, (आपत्तियों से कसे हुए और निरक्षर कृषक कहलाने वालों के हाथ में सौंप दिये गये हैं। और अब पढ़े-लिखे मनहूस नौकरी पर उतर उठे हैं। क्या यही शिक्षा का उद्देश्य है? हमें तो ऐसी संस्था की जरूरत है, जो हमारे घर की शिक्षा दे। हमें गुलामी की या उपदेश की टकसाल में ढालने की शिक्षा नहीं। हमें रोटियों की शिक्षा की जरूरत है। और जो देश की शिक्षा का प्रबन्ध करेगा, संसार देखेगा कि वह भारत में देवताओं के समान पूजा जायगा। पर वर्तमान सरकारी और गैर-सरकारी संस्थाओं में ऐसा प्रबन्ध नहीं दीखता। जो लोग भारत का भला चाहते हैं, उनका काम है कि वे भारत में कृषि, व्यापार और उद्योग की शिक्षा दें। इधर-उधर की शिक्षा में हमारा जीवन खराब न होना चाहिए और हजारों का खर्च कर बड़ी-बड़ी इमारत हमारे लिए न बननी चाहिए।

['एक उच्च शिक्षित' भाग-2, फाल्गुन मासिक पत्रिका, संख्या-12]

भारतवर्ष की वर्तमान उच्च शिक्षा

देश की शिक्षा का क्षेत्र, बहुत ही संकीर्ण रक्खा गया है, अनुकूल शिक्षा पर अभी विचार ही नहीं किया जाता। वे भाव, जो उच्च अनुकूल शिक्षा पर शिक्षा से पैदा होने चाहिए, प्राय: भारतवासियों के हृदय में पूर्ण रूप से पैदा करने का भरपूर अवसर ही नहीं मिलता। जिनके मस्तक देश की शिक्षा की वर्तमान अवस्था को सरलता से समझ सकते हैं उनसे यह बात छिपी नहीं है कि वर्तमान शिक्षा प्रणाली क्या कर रही है और उसे यथार्थ में क्या करना चाहिए। हाँ, सम्भव है, एकांगीयता के कार्य करने से भलाई सोची गयी हो, परन्तु प्रथम तो ऐसा करना नैतिक दृष्टि से अनुचित है। इसके सिवाय उस समय जब देश के कार्यकारी युवकों को अपनी आवश्यकता सोचते-सोचते, शिक्षा की प्रतिकूलता का ज्ञान हो गया हो, शिक्षा विभाग को चाहिए कि यदि वह पूर्ण रूप से देश के अनुकूल शिक्षा देने में संकीर्णता दिखाना ही चाहता है तो कम से कम, जो शिक्षा विभाग के गूढ़ स्वार्थ की साधारण रक्षा कर, शिक्षा स्वातंत्र्य के विचार जीवित जातियों की दृष्टि में कार्यकारी समझे जाते हैं, भारतवासियों में भी पहुँचा दे। और आत्म-सम्मान, सरल सहायता तथा नैतिक हानि के विचार से एतद्देशीय भाषाओं द्वारा उच्च शिक्षा देना स्वीकार करे। साथ ही नैतिक विचारों की शिक्षा को उस कक्षा में पहुँचा दे, कि जिससे भारतीय ग्रेजुएटों का चरित्र संगठन ठीक रीति पर हो। आजकल की उच्च शिक्षा में चरित्र-गठन कोई आवश्यक विषय नहीं है। नैतिक शिक्षा कोई आवश्यकीय शिक्षा नहीं है। और ऊँचे उद्देश्यों वाले होना ग्रेजुएटों का कोई आवश्यक लक्षण नहीं माना गया है। भारतीय ग्रेजुएटों की बुद्धि पर जो बोझा लादा गया है उसको वे कई रीति पर ढोने की चेष्टा तो करते हैं, परन्तु वह उनके उपयोग का बहुत कम रहता है। नैतिक शिक्षा का अभाव उन्हें योग्य ग्रेजुएट नहीं बनने देता। यही कारण है, कि आजकल के ग्रेजुएटों से, देश, जाति और साहित्य की भलाई की आशा करना तो दूर की बात है, स्वयं ग्रेजुएट भी विमल चरित्र है या नहीं, यह भी विचारणीय है। अभी हाल की ताजी घटना है। पूने में एक वकील है। आप उच्च शिक्षा प्राप्त है। बी. ए., एल.एल.बी. हैं। अभी आपको सेंध मारने और विश्वास-घात करने के कारण डेढ़ वर्ष के लिए जेल जाना पड़ा है। साथ ही 500 रुपया जुर्माना भी हुआ है।

सहयोगी 'सद्धर्म प्रचारक' कहता है कि 'शिक्षित (उच्च शिक्षित) मनुष्य को ऐसे निन्दनीय अपराध में सजा मिलना सचमुच बड़ी लज्जा की बात है। इसी से हम बार-बार कहते हैं कि धार्मिक शिक्षा में फेरफार करने की आवश्यकता है। बिना नैतिक और धार्मिक शिक्षण का योग हुए ये खराबियाँ कभी नहीं निकल सकतीं।

इसमें सन्देह नहीं। धार्मिक शिक्षण पर तो हमें विशेष कहना नहीं है, पर नैतिक शिक्षण शिक्षा का एक भारी और आवश्यक अंग है। जिन्होंने अध्यवसाय कर अपने को देश के अनुकूल और उपयोगी बनाया है, उन्हीं में से कुछ ग्रेजुएट कार्यकारी हो सकते हैं, अन्य नहीं। हम कई साधारण पढ़े-लिखे मनुष्यों को ग्रेजुएटों से अधिक उच्च विचारशील पाते हैं। हमारे विचार से तो वर्तमान शिक्षा प्रणाली में बहुत परिवर्तन करने की आवश्यकता है। ❑

[भाग-1 माघ शुक्ल 1, 1970]

(माखन लाल चतुर्वेदी रचनावली से साभार)